जीवन है अनंत रहस्य ।

इसलिए जो ज्ञान से भरे हैं, वे जीवन को जानने से वंचित रह जाते हैं ।

उसे तो जान पाते हैं केवल वे ही जो कि सरल हैं और जिनकी प्रज्ञा पर ज्ञान की धूलि नहीं जमी है ।

# एकांत

# युक्रांद

आचार्य श्री रजनीश जी की
सृजनात्मक जीवन दृष्टि का
पाक्षिक संकलन-पत्र

मानसेवी सम्पादक
अजित कुमार

सह-सम्पादक
आलोककुमार पांडे

वर्ष १ : अंक १०
१६ नवम्बर १९६९

मूल्य
६० न० पै० एक प्रति
वार्षिक १२ रु०

मुख पृष्ठ एवं छाया
शशिन् यादव

मुद्रक—जबलपुर को० आप० प्रेस
गोलबाजार, जबलपुर


## सम्पादक की कलम से

एक युग गुजर जाता है तब अवनी के आंगन में कोई फूल खिलता है और सौरभ को बिखेरते हुए वसुंधरा के प्राणों को सुवास से भर देता हैं। जगत् के चलते हुए घटना--चक्र में गतिमान जिन पथिक के प्राणों में वह सवास भर जाती है, उनके प्राण एक नई दिशा की ओर बढ़ जाते हैं, जहां होता है जीवन। और जो इस सुवास से वंचित रह जाते हैं उनका जीवन एक बोझ बनकर रह जाता है।

क्या पृथ्वी पर ईसा, सुकरात, महावीर, बुद्ध, गांधी, टैगोर आदि महान प्रतिभायें फूल बनकर विकसित नहीं हुईं ? अवश्य हुईं। लेकिन हमने कभी भी खुले नेत्रों से उनका अवलोकन नहीं किया। आचार्य रजनीश भी विचार और चिंतन के जगत में प्राणों को नई ज्योति देने वाले अद्‌भुत साधक एवं दूरगामी दार्शनिक रूप में भारतवर्ष की पावन धरा को प्राप्त हुए हैं।

जिनकी चेतना सजग होती हैं वे आचार्य श्री की वाणी में नई चेतना का अनुभव करते हैं।

आप भी चेतना की सजगता की ओर बढ़ें, इसी दिशा में हमारे सारे प्रयास आचार्य श्री की वाणी के माध्यम से केन्द्रित है।

—अजित

# बोध कथा

अ
मृ
त
आ
लो
क

**सत्य की साधना सतत् है। श्वास श्वास जिसकी साधना बन जाती है, वही उसे पाने का अधिकारी होता है।**

●

सत्य की आकांक्षा अन्य आकांक्षाओं के साथ एक आकांक्षा नहीं है। अंश मन से जो उसे चाहता है, वह चाहता ही नहीं। उसे तो पूरे और समग्र मन से ही चाहना होता है। मन जब अपनी अखण्डता में उसके लिए प्यासा होता है तब वह प्यास ही सत्य तक पहुंचने का पथ बन जाती है।

स्मरण रहे कि सत्य के लिए प्रज्जवलित प्यास ही पथ है।

प्राण जब उस अनन्त प्यास से भरे होते हैं, और हृदय जब अज्ञात को खोजने के लिए ही धड़कता है, तभी प्रार्थना प्रारंभ होती है। श्वासें जब उसके लिए आती जाती हैं, तभी उस मौन अभीप्सा में ही परमात्मा की ओर पहले चरण रखे जाते हैं।

प्रेम–प्यासा प्रेम ही उसे पाने की पात्रता और अधिकार है।

●

**सत्य को पाने के लिए क्या अपने प्राण दे सकते हो? जो इतना मूल्य चुकाने को राजी होते हैं, सत्य उन्हें निर्मूल्य मिल जाता है।**

★★★

# कितनी प्यास है ?

—शिव

जहाँ तक स्मरण कर पाता हूं पिछले वर्ष कार्तिक की संध्या थी वह, जब मौसम की धीमी सिहरन महसूस करता मैं आचार्य श्री के निवास पर जा पहुंचा था। फाटक खोलकर पुष्पों–लताओं से भरे बगीचे में मैं खड़ा हो गया था। उस समय ८ बजने को १० मिनट शेष थे, लगभग ८ बजे आचार्य श्री अपनी 'स्टडी' में आकर बैठ गए हैं, मैं उन्हें शीशों से बने द्वार से स्पष्ट देख रहा हूं। मैं कालबेल बजाना पसंद नहीं करता हूं क्योंकि उसकी आवाज मुझे कर्ण कटु लगती है। फिर जो आवाज मुझे ही अप्रीतिकर लगती है वह उन्हें कैसे सुनाऊं जिनके प्रति सहज ही एक प्रेम-सा अनुभव करता हूं। अतः मैं खड़ा रह गया हूं कि कोई तो निकलेगा। तभी, लगभग ८-२५ पर, चार सज्जन स्कूटर से आए हैं और उनमें से एक ने मुझसे पूछा है, आचार्य जी हैं ? मैंने कहा-जी हां। वे पूछते हैं, 'कोई और मिलने वाला उनके पास हैं' ? मैंने कहा, 'नहीं'। वे बोले : 'हम उनसे मिलना चाहते हैं, हमने समय लिया है'। मैंने कहा : 'समय लिया है तो मिलिए' और कि 'मैं खुद भी मिलने की आकांक्षा लेकर आया हूं'। अब उन्होंने कालबेल बजा दिया है और क्रान्ति बहन ने दरवाजा खोला है। मैं भी उन अपरिचित मित्रों के साथ कक्ष में प्रवेश कर गया हूं। आचार्य श्री मुसकाते हुए उन मित्रों की सकुशलता पूछते हैं। फिर मेरा भी हाल-चाल पूछते हैं। और अब उन मित्रों ने अपनी शंकाएं रखनी शुरू कर दिया है।

पूछा है : "आप कहते हैं चित्त के शांत होने पर जो अनुभूति होती है, वही परमात्मा है। लेकिन वह अनुभूति संभव क्यों नहीं होती ?"

आचार्य श्री ने कहा है : "उसके न होने के अनेक कारण हैं, लेकिन उनमें से तीन-चार जो मुख्य हैं, उन्हें मैं आपसे कहता हूं। तो प्रथम तो परमात्मा के लिए हमारे भीतर प्यास का अभाव है। अभी पिछले दिनों मैं पटना था। एक ही दिन में तीन-चार मीटिंगें थीं। अंतिम मीटिंग समाप्त होने पर एक मित्र मेरे पीछे-पीछे गाड़ी लिए, जहाँ मैं ठहरा था वहां, आए और उन्होंने मुझको कहा : "मैं परमात्मा को पाना चाहता हूं, मुझे कुछ बताएं"। मैंने उन्हें कहा : "अभी तो मैं चार मीटिंगों में बोला हूं और थक गया हूं, प्रातः ७ बजे आ जायें तो बातें करूंगा"। उन्होंने कहा : "८ बजे तो मैं सोकर उठता हूं फिर ७ बजे कैसे आना हो सकता है,"। मैंने कहा फिर १०॥ बजे आ जायें। वह कहने लगे १०॥ बजे तो मैं आफिस में रहूंगा। मैंने कहा, फिर ५ बजे सन्ध्या आ जायें। वह कहने लगे," ५ बजे तो मेरा दूसरा एपॉइंटमेण्ट है। और कि, क्या आप आज की रात मेरे लिए जग नहीं सकते ? क्या आप में इतना भी प्रेम नहीं है ?" मैंने कहा : "प्रेम तो मेरे अन्दर बहुत है और मैं जग भी सकता हूं। लेकिन आखिर कब तक ? इस तरह कब तक प्रेम किया जा सकता है ? अगर काम करना है तो विश्राम भी करना ही होगा"। तो ऐसी है हमारी प्यास। परमात्मा के लिए आधा घण्टा पहले उठ भी नहीं सकते। हमें ख्याल ही नहीं है कि दुनिया में प्रत्येक वस्तु के लिए मूल्य चुकाना पड़ता है। **बिना मूल्य चुकाए कुछ भी नहीं मिलता है, और फिर परमात्मा तो सब से मंहगा मिलता है। उसके लिए तो 'स्वयं' को ही दे देना पड़ता है।** पर उसे ही लोग सबसे सस्ते में पाना चाहते हैं जो सबसे मँहगा है। उसे चलते-फिरते कहीं से मुफ्त में पा जाना

चाहते हैं, कि कहीं जा रहे हैं काम-धन्धे से, रास्ते में कोई साधू, कोई सन्यासी हमारी पैण्ट की जेब में डाल दे। टुच्ची से टुच्ची बात के लिए श्रम करेंगे। मैट्रिक की सर्टीफिकेट के लिए १० वर्ष श्रम करेंगे। असफल हो जायेंगे तो पुनः वर्ष भर मेहनत करेंगे। पहलवान बनने के लिए १५ वर्ष कसरत करेंगे और अगर कहीं हार जायेंगे तो सोचेंगे अपनी साधना में कोई कमी है। लेकिन परमात्मा के लिए अगर दो माह 'ध्यान' किया और वह नहीं मिला तो 'ध्यान' बन्द कर देंगे कि समय गंवाना व्यर्थ है।

दूसरी बात, मान लें किसी को प्यास भी है और वह श्रम भी करता है, फिर भी परमात्मा नहीं मिलता। इसका कारण यह हो सकता है कि वह गलत दिशा में श्रम करता हो। और अगर श्रम भी ठीक दिशा में करता हो, फिर भी वह नहीं मिलता तो बहुत संभावना है कि उसमें आत्मविश्वास न हो। संभव है जीवन भर की शिक्षा, कि किसी की कृपा से ही वह मिलेगा, उसमें आत्मविश्वास ही न पैदा होने देती हो। और फिर जहां आत्मविश्वास न हो वहां तो प्रारम्भ ही निर्वीर्य है।

उन मित्र ने पूछा : "कर्म व संस्कार की जो इण्डियन फिलॉसफी है, उस सम्बन्ध में आपका क्या कहना है ?"

आचार्य श्री ने कहा : "कर्म, संस्कार व भाग्य आदि सब व्यर्थ की व्याख्यायें हैं। इन्हीं व्याख्याओं ने भारत को निर्जीव, नपुंसक व निकम्मा बना दिया है। इन्हीं व्याख्याओं ने मनुष्य में पुरुषार्थ को जन्मने नहीं दिया है। सारी पृथ्वी पर एक भारत ही ऐसा मुल्क है जो १००० वर्षों तक गुलाम रहा। वह इन्हीं व्याख्याओं के कारण। फिर राजा राममोहन राय से लेकर जवाहर-लाल नेहरू तक जो भी स्वतन्त्रता की आकांक्षा किये हैं, उन सब को ही पश्चिम से प्रेरणा मिली है वर्ना आज भी भारत गुलाम होता। कर्म का फल तत्क्षण मिलता है। अभी हाथ आग में डालूंगा तो अभी ही जलूंगा, अगले जन्म में नहीं। अभी प्रेम करूंगा तो अभी ही आनंदित हूंगा, अगले जन्म में नहीं। अभी घृणा करूंगा तो अभी ही दुखी हूंगा। संक्षेप में कहूं कि **मैं किसी ऐसी बात का समर्थन नहीं करता हूं जो मनुष्य के पुरुषार्थ को छीन लेती हो, जो उसकी संकल्प-शक्ति को हीन बनाती हो। मैं तो कहता हूं मनुष्य सब कुछ कर सकता है। वह 'चाहे' और बस वह कर सकता है।** इन साधु-सन्यासियों ने इस देश को नपुंसक बना दिया है। एक व्यक्ति किसी की हत्या करता है तो वह अपराधी कहलाता है। उसे दंड मिलता है। लेकिन अगर कोई करोड़ों लोगों को गलत दिशा में ले जाता है, गलत चीज का प्रचार करता है तो उसके प्रति समाज सोया रहता है। **मेरी दृष्टि में वे साधु-सन्यासी अधिक अपराधी है जिन्होंने करोड़ों मनुष्यों की आत्मा को निकम्मी बना दिया है। इन साधु सन्यासियों ने हमें यही अंध विश्वास दिया है। यह बड़ी अजीब बात है कि हमारे पास जो भी आज ज्ञान है, वह सब अधर्मियों ने दिया है।** २०० वर्ष पूर्व हम यह नहीं जानते थे कि रक्त शरीर में दौड़ता रहता है। हम जानते थे वह शरीर में कहीं भरा रहता है। इसी तरह की बहुत सारी बातें जो आज हम जानते हैं, जिनका आज हम उपयोग करते हैं वह सब अधर्मियों का दिया हुआ है।

दूसरे मित्र ने पूछा : "आपने अपने इन्दौर वाले प्रवचन में कहा था कि आगे कोई जन्म नहीं है। क्या सचमुच ही पुनर्जन्म नहीं होता ?"

आचार्य श्री ने कहा : "मुझे लोग बहुत गलत समझते हैं। आगे जन्म है, और निश्चित है। मैं इसका विरोध नहीं करता। जब मैं कहता हूं आगे कोई जन्म नहीं है तो मेरा कुल मतलब इतना होता है कि आगे के जन्म को आधार बनाकर कुछ मत करना। जैसे कि कोई सोचता हो कि इस जन्म में मौज कर लूं, परमात्मा की खोज अगले जन्म में कर लूंगा। या कि अच्छे कर्म करूं ताकि अगला जन्म शुभ हो। जो है अभी है, यहीं है वर्तमान ही सत्य है। भूत बीत गया, भविष्य अभी आया नहीं। जो समक्ष है, वही सत्य है।"

अब वे मित्र विदा लिए हैं और आचार्य श्री के प्रति प्रेम व आदर प्रकट करते हुए चले गए हैं। कुछ देर बैठकर मैं भी चला आया हूं हालांकि आचार्य श्री के पास से उठकर आने का जी कभी नहीं होता। ★

(श्रीमती जयवंती शुक्ल, जूनागढ़)

मेरे जीवन में किरन बनके बिखरने वाले अब तो तू ही जीवन बन गया है। क्या लिखूँ ? कुछ भी लिखने में अधूरापन महसूस होता है।

फिर भी दो माह से स्मृतियों को शब्द रूप में ढालने का प्रयत्न कर रही हूं। जब भी कलम उठाके स्मृतियों को टटोलती हूं, तब पूरा अतीत वर्तमान बन जाता है। मूक भाव से अविरत अश्रुधारा बहने लगती है। कागज–कलम की कोई सुध ही नहीं रहती। फिर तो मैं कहां ! वहीं रह जाते हैं। कौन, क्या लिखे ?

आज सातवीं बार कलम उठायी है। मैं को मजबूत करके बैठी हूं। सब भावों को प्रणाम करके विदा होने की प्रार्थना की है। देखूँ, बेचारी स्मृतियां क्या दे रही हैं ! लगता है चाहे जितना लिखूँ, फिर भी वह तो नहीं कह पाऊंगी जो घटित हो रहा है, दिखाई पड़ रहा है। फिर भी अंतस् को उड़ेलने की कोशिश करूंगी।

न जाने क्यों बहुत छोटी उम्र में मुझे प्रभु पाने की प्यास जग गई। तुरन्त एक प्रश्न खड़ा हो गया, वो कब मिलेंगे ?

बस, इसी प्यास ने मुझसे वही सब कुछ करवाया जो आमतौर पर लोग करने को राजी नहीं होते। प्राण तो प्रभु को पुकार रहे थे, पैर उसकी खोज में संसार में भटक रहे थे। बड़ी जल्दी से उसे पाना था, चाहे जान की बाजी क्यों न लगानी पड़े। त्याग की अति में ऐसी फंसी कि घर छोड़ने को तय कर लिया।

घर वालों को यह सब अतिरेक लग रहा था। मैं बिल्कुल लापरवाह थी। मैं इतनी निराश और उदास हो गयी थी कि एक मैं ही जानती थी। लोग इस उदासीनता पर अपने मनगढंत अनुमान लगा रहे थे। मुझे कोई असर नहीं था। न तो सुख, सुख लगता था न तो दुःख, दुःख लगता था। पाप का कोई भय नहीं था, पुण्य की कोई फिक्र नहीं थी। जैसे कोई चित्त ही नहीं था। करीब-करीब चित्त भ्रमित सा हो गया था।

बहुत साधु सन्तों से गुजर कर भी अन्ततः एक ऐसी जगह पर आके खड़ी हो गई, जहां से पीछे लौटना भूल गई, या तो मेरे बस में नहीं था। आगे जाने की सुध गवां बैठी थी। दिग्मूढ़ चित्त दशामें मैं मरी-मरायी जी रही थी, एक ही आशा में कि, कोई तो मेरी आंखों में झांकेगा जो पलक मूँदना बिसर गई है, और प्रभु-विरह की पीड़ा में दिन रात बेचैन है।

ऐसी भाव विभोर दशा में प्रज्ञापुरुष रजनीश जी को सुनने गई। दो प्रवचन सुन चुकी थी। दोपहर एक घन्टे मौन में हम सब बैठे थे। अचानक मुझे लगा कि मैं जिसे खोजती हूं, शायद वह आ गया है। उठकर उनके पास गई। दो-तीन मिनट तक उनके पास मौन बैठ गई। अन्तस् की पुकार अश्रुधारा में फूट पड़ी। उन्होंने मेरे सिर पर हाथ रखा और अपना अंगूठा मेरे कपाल के बीच में एक अच्छे चिकित्सक की भांति दबाया। मैंने उनकी ओर देखा, उन्होंने मेरी आंखों में इतनी करुणा से झांका कि, उसी क्षण मेरी सारी निराशा आशा में, अन्त आशा में पलट गई। मुझे लगा कि इस करुणामय दृष्टि ने मेरे अन्तःचक्षु के आवरण तोड़ दिये। सारे शरीर में चेतना की लहर फैल गई, रोम-रोम जीवन्त हो उठा।

सच ही परमात्मा की भाषा वे जानते हैं। कोई बातचीत नहीं फिर भी मैंने बहुत कुछ पा लिया और एक संकल्प के साथ वहां से उठी कि जरूर यही मेरे हृदय को सुन सकेंगे। जिसकी हर धड़कन में एक ही मांग गूँजती है। दूसरे दिन उनसे मिलने गई। उन्होंने मेरी बात बहुत शान्ति और प्रेम से सुनी। उन्होंने सिर्फ इतना ही कहा, तू कहीं अटक गई है। तुझे ईश्वर जरूर मिलेंगे। ईश्वर की फिक्र छोड़ तू, अपने शरीर की फिक्र कर।

तब मुझे पता चला कि मैंने शरीर के प्रति कितना कठोर व्यवहार किया था।

उनके तो अंग-अंग से परमात्मा प्रगट हो रहा है। जीवन के हर पहलू पर अपना जीवन्त परिचय दे रहे हैं। अपने को लुटा रहे हैं। परमात्मा करे हम सब अपनी झोली भरने में समर्थ बनें।

इस घटना से आप यह मत समझना कि मेरा समाधान हो गया होगा। मैं भी इस भूल में पड़ गई थी। लेकिन उनको विदा देने के बाद अनुभव हुआ कि वे घाव भुलाने वाले नहीं बल्कि और पीड़ा से भरने वाले हैं। अब तो प्यास ही प्यासी होकर पूरे प्राणों की गहराईयों में प्रविष्ट हो चुकी, मैं कौन हूं, कहां हूं, जानने के लिये।

आज मुझे लगता है, यह सब पिछले जन्मों में हुआ था। उस जयवन्ती की राख हो चुकी है, राख फेंक-कर कुछ अस्थियां निकाली, ये अस्थियां कहानी कह रही थीं।

नये जीवन की स्मृतियाँ बहुत कुछ कहने को राजी हो गई हैं, फिर कभी हिम्मत जुटाऊंगी।

★

# आचार्य श्री रजनीश के प्रति

नरेन्द्र "बायल"

तुम मानव मन के तरुनाई हो,
तुम मानव मन के शहनाई हो।
दुर्गम महान पथ के नेता, हे महा पथिक,
हर कदम तुम्हारे बढ़ते हैं,
बाँधे जागरण की आश,
लेकर जागरण को साथ।
साथ है, अखिल विश्व विशाल,
हृदय में लिए महा विश्वास,
पद चूमा करता है।
आकाश, तुम्हारा महा प्राण,
दुर्गम महान पथ के नेता, पथ के प्रचंड आलोक॥
तुम्हें शत् शत् प्रणाम।

★

# युद्ध और शांति : समस्या और समाधान

## ? ? ? ? ?

### ( आचार्य श्री से डा० गोविन्द दास जी की हुई एक चर्चा से )

अरस्तू ने मनुष्य को बुद्धिशील प्राणी कहा है लेकिन मनुष्य के इतिहास को देखते हुए उसे युद्धशील प्राणी कहना ज्यादा उचित है। पूरा इतिहास ही युद्धों का इतिहास है। ऐसा कोई समय कभी नहीं रहा है जब पृथ्वी पर किसी न किसी कोने में युद्ध न रहे हों। छोटे-छोटे काल बीच में दिखायी पड़ते हैं वे भी वस्तुतः शांति के नहीं है। क्योंकि दो युद्धों के बीच का जो समय है उसे शांति का काल कहना इसलिये व्यर्थ है कि वस्तुतः वह युद्ध की तैयारी का समय होता है। इस भांति हम सारे इतिहास को 'युद्ध' और 'युद्ध की तैयारी' इन दो खण्डों में बांट सकते हैं। यह बहुत आश्चर्यजनक मालूम होता है कि युद्ध और विनाश पर ही हमने सारी शक्ति, सम्पदा और समय का व्यय किया है। यह दुर्भाग्यपूर्ण वस्तु स्थिति आकस्मिक नहीं हो सकती। इसके पीछे निश्चय ही कुछ मूलभूत कारण हैं। वे कारण आर्थिक-राजनैतिक मात्र नहीं है वरन् आध्यात्मिक हैं। क्योंकि अर्थ-व्यवस्था बदल जाती है, राजनैतिक ढाँचे परिवर्तित हो जाते हैं, किन्तु युद्ध की वृत्ति वैसी की वैसी बनी रहती है। युद्ध के बहानों में परिवर्तन हो जाता है परन्तु हममें कोई परिवर्तन नहीं होता। कभी धर्म के, कभी अर्थ के, कभी राजनैतिक विचारधाराओं के, कभी राष्ट्रीय और जातीय अहंकारों के बहाने युद्ध लड़े जाते हैं लेकिन वे मात्र बहाने ही हैं, असली बात तो युद्ध की वृत्ति है जैसे खूँटियों पर लोग कपड़े टांग देते हैं वैसे ही बहानों पर युद्ध टांग दिये जाते हैं। इसकी एक कथा है—नदी में भेड़िया पानी पी रहा है और नीचे की तरफ भेड़ का एक बच्चा। भेड़िये ने उसे चिल्लाकर कहा, देख, पानी गंदा न कर, मैं पानी पी रहा हूं। उस भेड़ के बच्चे ने कहा, महानुभाव, मैं तो धार में नीचे की तरफ हूं और मेरे द्वारा आपका पानी गंदा कैसे हो सकता है! भेड़िये ने कहा—देख, बढ़ चढ़ के मत बोल, कल तेरे पिता ने भी मेरा अपमान किया था। उस बच्चे ने कहा—महानुभाव, मेरे पिता को मरे छै महीने हो चुके। यह सुनते ही उस भेड़िये ने मेमने की गर्दन पकड़ ली और कहा तुझे बड़ों से कैसी बात करनी चाहिए यह पता नहीं, छोटा मुँह और बड़ी बात। युद्धों के बहाने भी सब ऐसे ही हैं। एक बहाना नहीं तो दूसरा काम दे देता है। बहाना एकदम गौण हैं और युद्ध की वृत्ति को छिपाने के उपाय से अधिक नहीं है। अकारण लड़ना अशुभ मालूम होता है इसलिए हम कोई कारण खोज कर लड़ते हैं। ये कारण समय की फैशनों के अनुसार कभी राजनैतिक होते हैं, कभी आर्थिक, कभी राष्ट्रीय, कभी जातीय और कभी धार्मिक। फिर इन कारणों का व्यापक प्रचार करने पर वे सत्य भी प्रतीत होने लगते हैं। अडोल्फ हिटलर ने अपनी आत्म कथा 'मेन केम्फ' में लिखा है कि बहुत बार प्रचारित असत्य ही सत्य हो जाता है, यानी सत्य और असत्य में इससे ज्यादा भेद नहीं है। हिटलर की दृष्टि में सत्य की परिभाषा बहुप्रचारित असत्य है और यही परिभाषा सभी युद्धवादियों की है। हम लड़ना चाहते हैं इसलिए लड़ते हैं। हां, इतने सुसंस्कृत जरूर हो गये हैं कि इस सत्य को कि लड़ने की चाह से लड़ाई

निकलती है छिपा जाते हैं। युद्ध के कारणों के धुएं में युद्ध की वृत्ति को लपट को छिपा लेने में मनुष्य निरन्तर निष्णात् हो गया है। इसीलिए हमारी दृष्टि यही है कि युद्ध मूलतः एक अध्यात्मिक रोग है और जब तक इस सत्य का हमें स्पष्ट दर्शन न हो कि हम युद्ध के लिए युद्ध करते हैं तब तक युद्ध की मनोवृत्ति के विषाक्त बीजों को नष्ट करना संभव नहीं हो सकता। कला, के लिए चाहे न हो, लेकिन युद्ध निश्चय युद्ध ( War for war) के लिए ही है।

युद्ध की इस वृत्ति का मूल कारण क्या है, इस पर विचार करना अत्यन्त आवश्यक है। मनुष्य में साधारणतः हम जीवणेषणा (Life instincts) को पाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति जीना चाहता है। जीवन प्रिय है, और हमारा बस चले तो हम अनन्त काल तक जीना चाहते हैं। यह जीवन आकांक्षा अत्यन्त प्रकट है। पशुओं में भी उसके दर्शन होते हैं लेकिन मनुष्य में एक और नई अभीप्सा के दर्शन होते हैं जो कि किसी अन्य प्राणी में उपलब्ध नहीं है। वह अभीप्सा है आत्मघात। मनुष्य को छोड़कर जगत में कोई प्राणी आत्मघाती नहीं है। इस भांति मनुष्य के चित में जीवन अभीप्सा और मृत्यु अभीप्सा ( Death instincts) दोनों हैं। इन दोनों के बीच विरोध और तनाव चलता रहता है। इन दो ध्रुवों के बीच में जिस ध्रुव पर वह स्वयं स्थित हो जाता है अनिवार्यतया दूसरों के लिए वह शेष ध्रुव का व्यवहार करने लगता है। अर्थात् यदि वह जीवणेषणा से परिचालित है तो अनिवार्यतया उसका समस्त अचेतन व्यवहार दूसरों के विनाश और मृत्यु के लिए अग्रसर हो जाता है। उसकी सारी जीवन चर्या स्वयं के लिए तो जीवन और दूसरों के लिए मृत्यु की आकांक्षी हो जाती है। उसे ऐसा दिखायी पड़ने लगता है कि मेरा जीवन दूसरों की मृत्यु पर ही निर्भर है, मेरा निर्माण उनके विनाश पर ही अवलम्बित है, मेरा विकास उनके पतन पर ही संभव है। जो व्यक्तियों के सम्बन्ध में सही है वही जातियों और राष्ट्रों के सम्बन्ध में भी सही है। व्यक्तिगत जीवन में जो संघर्ष तथा कलह, ईर्ष्या एवं गलाघोंट प्रतियोगिता ( कट थ्रोट कॉम्पटीशन ) पैदा होती है, उसका यही कारण है। इसके ही विस्तीर्ण और विराट रूप राष्ट्रीय तथा जातियों के जीवन में देखे जाते हैं, युद्ध का मूलकारण इसी में छिपा हुआ है। स्वयं के जीवन के प्रति अत्यन्त चिन्तित हो जाता है, इसके अतिरिक्त उसे जगत् में कुछ भी महत्वपूर्ण नहीं लगता। वह अपने बचाव के लिए सारे जगत् के विनाश के लिए तैयार हो सकता है। यह अहंकार के उत्कर्ष की चरम अवस्था है।

मनुष्य में दूसरी वृत्ति है, आत्मघात की या स्वयं को मिटा देने की। जो व्यक्ति किसी भी भांति इस वृत्ति में आरूढ़ हो जाता है वह या तो स्वयं की देह को आत्महत्या से नष्ट कर देता है या क्रमशः संसार और शेष सत्ता से अपने सम्बन्ध विच्छिन्न करके क्रमिक मृत्यु ( ग्रेजुअल डेथ ) में संलग्न हो जाता है। संसार के तथा कथित सन्यासियों में से अधिकतम इसी तरह की मृत्यु वृत्ति के शिकार हैं। उनका जीवन स्वयं के निषेध पर ही निर्भर है। उनका रस और आनन्द खुद को मिटाने में ही है। ऐसे व्यक्ति निश्चत ही शांतिवादी होंगे क्योंकि न उनकी किसी से ईर्ष्या है, न प्रतिस्पर्द्धा है। जिन्हें जीवन की ही आकांक्षा नहीं, उन्हें दूसरी आकांक्षाओं का प्रश्न ही नहीं उठता। जो स्वयं मृत्यु के लिये राजी हो जाते हैं, उन्हें हम पलायनवादी कह सकते हैं। एक ओर हैं युद्धवादी और दूसरी ओर हैं पलायनवादी। यदि युद्धवादी जीत जाय तो भी जगत का विनाश हो जायगा और यदि पलायनवादी जीत जाय तो भी। युद्धवादियों की चरम परणति एक दूसरे के विनाश के कारण सर्वनाश बन जायगी और तथा कथित शांतिवादियों की शांति स्वयं के विनाश के द्वारा सर्वनाश में फलित हो जायेगी।

जीवन के सम्यक् विकास के लिये ये दोनों ही विकल्प नहीं हैं न तो जीवणेषणा से अभिप्रेरित युद्धवाद और न जीवन वितृष्णा से उत्प्रेरित मृत्युवाद। जीवणेषणा के श्रेष्ठतम समर्थक हैं नीत्से और

मृत्यु अभीप्सा के समर्थक हैं वे सारे पलायनवादी लोग जो समस्त संसार को त्याज्य तथा परम मृत्यु को ही मोक्ष मानते हैं। न तो जीवन लक्ष्य है और न मृत्यु। लक्ष्य वह सत्ता है जो जीवन और मृत्यु दोनों के पीछे है। उसकी अनुभूति तभी संभव होती है जब कोई व्यक्ति जीवणेषणा और मृत्यु अभीप्सा की ध्रुवताओं (पोलेरेटीज) से मुक्ति पा लेता है। वे दोनों ही असंतुलन हैं। एक से इतना उत्ताप पैदा होता है कि जीवन जल जाय एवं दूसरे से इतनी शीतलता पैदा होती है कि जीवन गल जाय। जीवन की संभावना तो मध्य में और संतुलन में है। न तो हम युद्ध का उत्ताप चाहते हैं और न त्यागवाद की शांति जिसे कि कब्रिस्तान की ही शांति कहा जा सकता है। मनुष्य के जीवन का परम पुरुषार्थ जीवन तथा मृत्यु की वृत्तियों के बीच मध्यबिंदु पर ठहर जाने में है। उस बिंदु पर ठहर कर ही स्वयं की आत्मा के सत्य को जान पाता है और साथ ही सबकी आत्माओं के सत्य को भी। तब उसे दिखायी पड़ता है कि न तो कोई मृत्यु है न तो कोई जीवन। जो है वह शाश्वत एवं सनातन है। वह ऊर्जा जो जन्म में प्रकट होती और मृत्यु में अप्रकट हो जाती है वह जन्म के भी पहले है और मृत्य के भी बाद है। ऊर्जा का नाम ही ईश्वर है। इस सत्य का साक्षात्कार न तो उसे स्वयं की जीवणेषणा से भरता है क्योंकि वहां तो शाश्वत जीवन उपलब्ध ही है और न स्वयं की मृत्यु की अभीप्सा से क्योंकि मृत्यु तो वहां असम्भव है। इस भांति जो स्वयं जीवणेषणा से पृथक् होता है वह दूसरों की मृत्यु तथा विनाश वृत्ति से भी मुक्त हो जाता है। इस स्थिति में आकर ही युद्ध वृत्ति का अतिक्रमण होता है और युद्ध वृत्ति के अतिक्रमण पर ही ठीक-ठीक अर्थों में मनुष्य का जन्म है। अब तक का जो इतिहास है वह इतना युद्धों से भरा है कि उसे मनुष्यों का इतिहास कहना कठिन है। मनुष्य अभी जन्मने को है। यह जन्म सद्धर्म के द्वारा होगा। उसके ही द्वारा शाश्वत एवं अमृत सत्य को जाना जा सकता है। उससे ही जीवित शांति फलित होती है। वैसे मनुष्यों का समाज निर्मित हो जो कि स्वयं को जानकर जीवन्त शांति में प्रतिष्ठित हों, तो ही हम जगत् को युद्धों के पार ले जा सकते हैं। समस्त कलह और युद्ध का कारण मनुष्य के भीतर जीवणेषणा और मृत्यु की वृत्ति में है। उस द्वन्द्व के समाधान से ही युद्ध की वृत्ति का समाधान हो सकता है।

●.●

## – प्राणवान पुकारें –

- मेरा आक्रोश है आपको हिलाने का आप जिन थोथी श्रद्धा और अंध विश्वास पर खड़े हैं, वहां से हिल जायें ताकि संदेह और विचार का जन्म हो सके।

- धार्मिक हुए बिना ही लोग धार्मिक बन बैठे हैं, यही सारे उपद्रव की जड़ है।

- एक ऐसी दुनिया चाहिए जहां कोई नेतृत्व की जरूरत न हो।

संकलन : जयवंती शुक्ल
जूनागढ़

# गांधीवादी कहां हैं ?

(के०सी० कालेज, बंबई में दिया गया प्रवचन)

बंबई जीवन जागृति केन्द्र के सौजन्य से —

मैं निरंतर सोचता रहा, व्येअर आर दी गांधीयन्स, गांधीवादी कहाँ हैं ? लेकिन मेरे भीतर सिवाय एक उत्तर के और कुछ भी शब्द नहीं उठा। मेरे भीतर एक ही शब्द उठ रहा है, वहीं हैं जहां हो सकते थे। यही सोचते हुये रात में सो गया और सोने में मैंने एक सपना देखा। उसी से मैं अपनी बात शुरू करूँगा। शायद यही सोचते हुये सोया था कि गांधीवादी कहाँ हैं, इसलिए वह सपना निर्मित हुआ होगा।

मैंने देखा कि राजधानी के एक बहुत बड़े बगीचे में जहाँ गांधीजी की एक बड़ी मूर्ति खड़ी है, मैं उस पत्थर की प्रतिमा के नीचे पड़ी हुई बेंच पर बैठा हुआ हूं। दोपहर है और बगीचे में सन्नाटा है। कोई भी नहीं है। मैं सोचने लगा कि गांधी जी से पूछ क्यों न लिया जाये कि गांधीवादी कहाँ हैं। लेकिन इसके पहले कि मैं पूछता, मैंने देखा कि गांधी जी की प्रतिमा कुछ कह रही है। तो बहुत गौर से सुनने लगा। गांधीजी की प्रतिमा कह रही थी कि नेताओं ने मुझे कहाँ खड़ा कर दिया है। धूप में, वर्षा में, सर्दी में। और राणाप्रताप को घोड़ा दिया हुआ है, शिवाजी को घोड़ा दिया हुआ है, रानी लक्ष्मी बाई को घोड़ा दिया हुआ है। मुझे पैर पर खड़ा कर दिया है। मैं बहुत हैरान हुआ। मैंने नहीं सोचा कि गांधीजी गुस्सा होते हैं। मैं भागा हुआ राजधानी के बड़े नेता के पास गया कि गाँधीजी बहुत गुस्से में हैं, बहुत नाराज हो रहे है कि नेताओं ने मुझे कहाँ खड़ा कर दिया है। मुझे भी घोड़ा चाहिए। उन नेता ने कहा ऐसा कभी नहीं हो सकता, गांधीजी कभी नाराज नहीं हो सकते। मैं तुम्हारे साथ चलता हूं मैं उन नेता को ले जाकर प्रतिमा के सामने खड़ा कर दिया उस प्रतिमा ने कहा मैंने घोड़ा लाने को कहा था तो इस गधे को कहां से ले आये। मैं हैरान हुआ। यह तो मैंने कभी सोचा भी नहीं था। उनके इस कहने से उन नेता का क्या हुआ, मुझे पता नहीं। मेरी नींद टूट गई और रात में बराबर सोचता रहा तो मुझे कुछ बातें ख्याल आयीं।

मुझे पहली बात तो यह ख्याल आयी कि इसमें गधों का कोई कसूर नहीं है। महात्माओं के पास गधे इकट्ठे हो ही जाते हैं। असल में महात्मा प्रथम कोटि के व्यक्ति होते हैं। प्रथम कोटि के व्यक्ति के पास प्रथम कोटि का कोई व्यक्ति कभी इकट्ठा नहीं होता। द्वितीय और तृतीय कोटि के लोग इकट्ठे होते हैं। असल में प्रथम कोटि का मनुष्य कभी किसी का अनुयायी नहीं बनता। अनुयायी हमेशा द्वितीय और तृतीय कोटि के लोग बनते हैं। **असल में बुद्धिहीनों के सिवाय अनुयायी कभी कोई नहीं बनता। जिनके पास अपनी बुद्धि है वे अपने पैरों पर खड़े होते हैं और किसी के अनुयायी नहीं होते। इसलिए अनुयायी तो अनिवार्य रूप से खतरनाक है।** क्योंकि बुद्धिहीनता ही किसी को अनुयायी बनाती है। गांधी के पास जो लोग इकट्ठे हुए इस देश के, वे दूसरी और तीसरी श्रेणी के बुद्धि के लोग थे प्रथम श्रेणी का कोई व्यक्ति उनके पास इकट्ठा नहीं हुआ। इकट्ठा हो भी नहीं सकता है। प्रथम कोटि का आदमी कभी किसी के पीछे नहीं चलता। अपनी ही दिशा खोजकर चलता

है। न कोई महावीर, न कोई बुद्ध, न कोई जीसस, कभी किसी के पीछे चलता है, न कोई गाँधी कभी किसी के पीछे चलता है। जो लोग किन्हीं के पीछे नहीं चलते उनके आसपास इस तरह के लोग इकट्ठे हो जाते हैं जो सदा किसी के पीछे चलते हैं। इस बात को ठीक से समझ लेना जरूरी है कि अनुयायी कभी बुद्धिमान आदमी नहीं होता और महात्मा के मरने के बाद इन्हीं बुद्धिहीनों के हाथ में महात्मा की सारी व्यवस्था पड़ जाती है। प्रथम कोटि का आदमी मरा कि द्वितीय कोटि के लोगों के हाथ में सत्ता चली जाती है। गांधी के मरते ही हिन्दुस्तान की सत्ता द्वितीय श्रेणी की बुद्धि के पास चली गई। लेकिन वह भी द्वितीय श्रेणी की बुद्धि भी कुछ मूल्य रखती है। अब तो वह खत्म हो चुकी। अब जो तीसरी श्रेणी के लोग उनकी जगह बैठे हुए हैं। ये तीसरी श्रेणी के जो लोग हैं वे गांधी के जमाने में स्वयं सेवक का और वालन्टियर का काम करते थे। फट्टा बिछाने का और गाँव में डुगडुगी पीटने का काम करते थे कि महात्मा आ रहे हैं। प्रथम श्रेणी के व्यक्ति के आसपास द्वितीय श्रेणी का सेकण्ड ग्रेड माइंड का एक घेरा खड़ा हो जाता है। यह अनिवार्य-तया है। द्वितीय श्रेणी के बाहर तीसरी श्रेणी का घेरा खड़ा होता है। प्रथम श्रेणी के व्यक्ति के मरते ही दूसरी श्रेणी के व्यक्तियों के हाथ में शक्ति चली जाती है और कुछ बातें समझने जैसी हैं। यह ऐतिहासिक प्रतिक्रिया का अंग हैं। अब तक ऐसा होता रहा है, आगे न हो इसकी आशा करनी चाहिए। लेकिन अबतक ऐसा हुआ है कि प्रथम कोटि का व्यक्ति जब तक जिन्दा होता है, द्वितीय कोटि के बहुत तरह के लोगों में वह अपने प्रभाव को बाँधकर रखता है। लेकिन प्रथम कोटि के व्यक्ति के मरने के बाद द्वितीय कोटि के सारे लोगों में से एक कोई आदमी प्रथम कोटि का बनना चाहता है। बाकी सारे उसके साथी नाराज हो जाते हैं वे सब अलग हटना शुरू हो जाते हैं। सत्ता की दौड़ और असली वसीयत किसकी है, उत्तराधिकारी कौन है महात्मा का, प्रथम कोटि के व्यक्ति का कौन वंशाधिकारी है। तो द्वितीय श्रेणी के लोग प्रथम श्रेणी के व्यक्ति के स्वभाव में बंधे रहते हैं। लेकिन प्रथम श्रेणी के व्यक्ति के हटते ही द्वितीय श्रेणी के व्यक्तियों में आपसी कलह और संघर्ष और उपद्रव शुरू हो जाता है और वे सब एक ही कोटि के होते हैं। उनमें से कोई किसी का नेता नहीं होता है।

ऐसा हिन्दुस्तान में हुआ। गांधी के मरते ही गांधी ने इन बहुत से लोगों को अपने आसपास इकट्ठा किया हुआ था, गांधी के मरते ही वे सब एक दूसरे के दुश्मन हो गये। क्योंकि उनमें से वे सब साथी थे, उनमें से कोई किसी को प्रथम स्वीकार नहीं कर सकता था। फिर जो उनमें से प्रथम बन गया उसके बनते ही द्वितीय श्रेणी के सारे लोग बाहर हो गये और वह जो प्रथम श्रेणी का बन गया, दूसरी श्रेणी का व्यक्ति उसने तीसरी श्रेणी के व्यक्तियों को अपने आसपास इकट्ठा कर लिया। अब वे दूसरी श्रेणी के व्यक्ति भी जा चुके अब देश तीसरी श्रेणी के व्यक्तियों के हाथ में पड़ा हुआ है यह अनिवार्य है होना। यह महात्मा गांधी के साथ हुआ हो, ऐसा नहीं है। यह महावीर के साथ भी हुआ, बुद्ध के साथ भी हुआ, जीसस के साथ भी हुआ, यह हमेशा होता रहा है। यह होना तो तब बन्द होगा जब प्रथम कोटि के व्यक्ति अनुयायी इकट्ठा करना बन्द करें और अगर प्रथम कोटि के व्यक्ति अनुयायी इकट्ठा करने से इन्कार कर दें तो दुनिया का बहुत हित हो सकता है। लेकिन अब तक ऐसा नहीं हो सका। गांधी के साथ भी ऐसा नहीं हो सका और गांधी के माध्यम से देश थर्ड ग्रेड, तृतीय कोटि के हाथ में पहुंच गया। यह भी मैं आपसे कहना चाहता हूं कि यह जो स्थिति बनी है यह बिल्कुल निश्चित थी। यह बनती ही। इसलिए मैं गांधीवादियों को कोई दोष नहीं देना चाहता हूं। उनकी कोई आलोचना करने से मेरे मन में बहुत पीड़ा मालूम पड़ती है। वे आलोचना के योग्य भी नहीं हैं। आलोचना उनकी करना चाहिए जिनसे हम ज्यादा आशा रखते हों और वे आशा से नीचे सिद्ध हुए हों। अगर कोई आदमी कंकड़ पत्थर को हीरे मोती समझ ले और फिर बाद में कंकड़ पत्थर साबित हों तो आलोचना किसकी होनी चाहिए। कंकड़ पत्थर की या उस आदमी की? जिसे हमने हीरे मोती समझा था। अगर वह कहता है कि हीरे मोती धोखेबाज निकल गये, हीरे मोती

कभी धोखेबाज नहीं निकलते। सच बात यह है कि उसकी समझ की कमी थी और उसने कंकड़ पत्थरों को हीरे मोती समझा था। जब असलियत खुली तो वे कंकड़ पत्थर निकले उसे अपनी बुद्धि की आलोचना करनी चाहिए। मैं आपसे कहना चाहता हूं कि गांधीवादियों की आलोचना में मत पड़ना। इस देश को अपने मस्तिष्क की आलोचना करनी चाहिए कि तुम कंकड़ पत्थरों को हीरे-मोती समझ लेने की तुम्हारी आदत कब छोड़ोगे। लेकिन हम अपनी आलोचना करने से बचना चाहते हैं और दोष उनपर थोप देते हैं जिनका कोई भी दोष नहीं है। यह होने वाला था। इसलिए मैं कहता हूं, गांधीवादी वहीं हैं जहां हो सकते थे। इससे अन्यथा वे कुछ भी नहीं हो सकते थे और उनकी आलोचना में समय गंवाना व्यर्थ है। मनुष्य को अपने चित की आलोचना करनी चाहिए कि वे इस तरह के गलत लोगों को कैसे चुन लेते हैं। हम इनको आदर कैसे दे देते हैं। हम इनको प्रतिष्ठा, सत्ता और शक्ति कैसे दे देते हैं। अगर गांधीवादियों की आलोचना की गई तो मैं आपसे कहता हूं कि फिर हम इस तरह के नासमझों के हाथ में मुल्क को दोबारा दे देंगे। उनकी शक्लें दूसरी होंगी, उनके झंडे दूसरे होंगे, वे किसी और महात्मा के आसपास इकट्ठे होंगे और फिर वही गलती शुरू होगी जो हमने इधर बीस बरसों से की है।

मैंने सुना है कि एक आदमी ने अपनी जिन्दगी में आठ शादियां की और हर बार उसने जब पत्नी बदली तो उसने पक्का तय कर लिया कि अब इस तरह की पत्नी दोबारा नहीं चुनूंगा। लेकिन वह आदमी तो वही था। उसने फिर चार-छः महीने में उसी तरह की औरत को चुन लिया। चार छः महीने के बाद हैरान हुआ कि यह औरत भी फिर वैसी ही सिद्ध हुई जैसी पहली औरत थी। आठ औरतें बदलने के बाद उसको यह मिला कि मालूम होता है कि दुनियां की सब औरतें ऐसी हैं। क्योंकि जिस औरत को ले आओ वही वैसी सिद्ध होती है।

असल बात यह नहीं थी। असली बात यह थी कि चुनने वाला तो बदलता ही नहीं था। हर बार वही था उसकी पकड़ वही थी, सगझ वही थी, ढांचा वही था। हर बार उसकी पसन्द वही थी जो पुरानी थी। तो फिर वही चुन लिया जो पहले उसने चुना था। यह आठ औरतें बड़ी खोज से वह लाया था।

इस देश में इस तरह की भूल निरन्तर होती रही है। महात्माओं के आसपास इकट्ठे लोगों को हमने हमेशा चुना है। आज ही नहीं, महावीर के साथ भी यही, बुद्ध के साथ भी यही, गांधी के साथ भी यही और उसका परिणाम हम भोग रहे हैं। पांच हजार सालों में हमारा समाज, हमारा व्यक्तित्व, हमारी आत्मा रोज नीचे गिरती चली गई है। हम अनुयायियों को चुन लेते हैं। महात्मा के जीवित होने में, महात्मा की ज्योतियां उनमें झलकती हैं और लगता है कि वे जीवित हीरे मोती हैं। महात्मा के मरते ही ज्योति विलीन हो जाती है। कंकड़ पत्थरों में जो चमक थी ज्योति की, वह भी विलीन हो जाती है। वे कंकड़ पत्थर साबित हो जाते हैं।

यह हमें ध्यान रखना पड़ेगा भविष्य में कि हम व्यक्तियों को देखकर चुनाव न करें और व्यक्तियों को देखकर आदर न दें जीवन व्यवस्था और जीवन दृष्टि और जीवन दर्शन को देखकर चुनाव होना चाहिए। लेकिन हम व्यक्तियों से प्रभावित होने वाली कौम हैं। हम जीवन दर्शनों के सम्बन्ध में जरा भी विचार नहीं करते। इसका परिणाम यह होता है कि हर बार भूल होती है, हर बार हम वही भूल दोहरा लेते हैं और आलोचना करते हैं और आलोचना हम क्या करते हैं? आलोचना हम अनुयायियों की करते हैं। उससे कुछ भी नहीं होता है। मैं आपसे कहना चाहता हूं कि गांधीवादियों का तो कोई भी दोष नहीं हैं। सब वादी इसी तरह के सिद्ध होंगे। क्योंकि वादी कभी भी तृतीय, द्वितीय श्रेणी से ऊपर के लोग नहीं होते। वाद से मुक्ति चाहिए—चाहे वह गांधीवाद हो, चाहे मार्क्सवाद हो, चाहे और कोई वाद हो। अगर देश को अच्छा बनाना है तो वाद से मुक्ति चाहिए। एक वाद से छूटकर दूसरे वाद को पकड़ा जा सकता है। बहुत आसान है। लेकिन फिर

वही गल्ती हो जाएगी। दुनिया हर बार वाद को बदल लेती है और हर बार वही मुसीबत खड़ी हो जाती है जो पहले खड़ी थी। असल में वाद को चुनने की जरूरत नहीं है। गांधीवाद को चुनकर हमने भूल की है। मार्क्सवाद को चुनकर भी हम भूल कर सकते हैं। वाद हमेशा खतरनाक सिद्ध होगा क्योंकि वाद में सिर्फ वे ही लोग प्रभावित होते हैं जिनके पास अपने सोचने समझने की कोई बुद्धि नहीं होती। बुद्धुओं के सिवाय वादी कभी कोई आदमी नहीं होता। विचारशील आदमी सोचता है, समझता है, जीता है। किसी इज्म में, किसी वाद में बंधकर अपने को खड़ा नहीं करता। बांधने की उसे कोई जरूरत नहीं है। उसके पास अपने सोचने का ढंग है। वह सोचेगा। वह रोज-रोज जिन्दगी की समस्याओं का सामना करेगा। लेकिन वादी क्या करता है? वादी कहता है समस्या महात्मा हल कर गया है, हमारा गुरू हल कर गया है। अब हमें कोई समस्या हल नहीं करनी है। हमारे पास बंधे हुए समाधान हैं। कोई भी समस्या आ जाये हम अपनी किताब खोलकर समाधान निकाल लेंगे। वे समाधान खतरनाक सिद्ध हो सकते हैं। क्योंकि सब समाधान किसी विशेष परिस्थितियों में पैदा होते हैं और उस परिस्थिति के बाहर उनकी कोई सार्थकता नहीं होती। गांधीजी ने जो समाधान इस देश को दिया है वह गांधी जी की परिस्थिति में सार्थक हो सकते थे। लेकिन अब तक न वह परिस्थिति है, न वह ढंग है, न वह संदर्भ है। लेकिन वादी कहता है कि हम उन्हीं को सार्थक करके बतायेंगे और वादी इसलिये हमेशा पीछे से बंधा रहता है, जिन्दगी जाती है आगे की तरफ और वादी बंधा रहता है पीछे की तरफ। इसलिए वादी हमेशा जिन्दगी पर बंधन सिद्ध होता है।

इस देश की चेतना को वाद से, आइडियोलाजी से, इज्म से, शास्त्र से मुक्त करने की जरूरत है। लेकिन गांधी के आसपास एक नया शास्त्र खड़ा हो गया है। गांधी के शिष्यों में दो तरह के लोग थे। एक तो वे लोग थे जिनकी राजनैतिक बुद्धि थी और एक वे लोग थे जो सिद्धांत और शास्त्र की बुद्धि के थे। तो गांधी के बाद उनका खेमा दो वर्गों में बंट गया। गांधीवादी दो वर्गों में बंट गये—एक सत्ताधीश गांधीवादी हैं और एक मठाधीश गांधीवादी है। सत्ताधीश गांधीवादी सत्ता के ऊपर हावी हैं, मठाधीश गांधीवादी, गांधीवाद के शास्त्र के निर्माण करने में संलग्न हैं। सत्ताधीश गांधीवादियों ने सत्य अहिंसा उन सबकी हत्या कर डाली है और मठाधीश गांधीवादियों ने सत्याग्रह, असहयोग से सबकी हत्या कर डाली। गांधी के विचार में अहिंसा और सत्य का मूल्य था। जो लोग सत्ता में गये उन्हें जाते से ही पता चला कि सत्ता असत्य से चलती है और हिंसा से। सत्ता-हिंसा और असत्य से चलती है। तब उन्होंने दोहरे व्यक्तित्व ग्रहण कर लिये। हिंसा में उतरते गये, रोज असत्य जीने लगे और बातें सत्य और अहिंसा की और भी जोर से करने लगे। बातें इतने जोर से करनी जरूरी थीं ताकि वे जो कर रहे थे वह छिप जाये। बीस साल की आजादी में हिन्दुस्तान की अहिंसक सरकार ने जितनी हत्या और खून किया है और जितनी गोलियां चलायी हैं उतनी दुनियां की कोई हिंसावादी सरकार भी हिंसा करने का दावा नहीं कर सकती। अहिंसा की बात चलती रही और नीचे हिंसा चलती रही। सत्य की बात चलती रही और सत्ता की दौड़ में सब तरह का असत्य स्वीकार कर लिया गया है। अपरिग्रह और दरिद्रता के वरण करने की बात चलती रही और सब तरह की सम्पत्ति और सब तरह का लोभ और सब तरह का परिग्रह काम करता चला गया। मठाधीश गांधीवादी सत्याग्रह कर नहीं सकते, क्योंकि उनके ही भाई बन्धु दिल्ली में हुकूमत में बैठे हुए हैं। असहयोग नहीं कर सकते। तो उन्होंने भूदान का ईजाद किया हुआ है जिससे न समाज बदलता न समाज की जिन्दगी बदलती। लेकिन मठाधीश गांधीवादी को भी कुछ हाथ में चाहिए नहीं तो वह जिन्दा नहीं रह सकता। तो उसने असहयोग की बात बन्द कर दी, उसने सत्याग्रह की बात बन्द कर दी, क्योंकि सत्याग्रह किसके खिलाफ करोगे। असहयोग किसके खिलाफ करोगे। उसके ही भाई दिल्ली में हुकूमत कर रहे हैं। उसके खिलाफ सत्याग्रह भी नहीं हो सकता, असहयोग

भी नहीं हो सकता, जबकि सचाई यह है कि इन बीस वर्षों में सत्ताधिकारियों ने असहयोग और सत्याग्रह की जितनी सम्भावनाएँ और परिस्थितियाँ दी थीं उतनी अंग्रेजों ने भी मुश्किल से दी थीं लेकिन मठाधीश गांधीवादी तो सत्याग्रह किसके खिलाफ करे। तो उसे कोई ऐसा उपाय खोजना चाहिए जो सरकार के साथ-साथ चल सके। अभी मैं बिहार में था तो बिहार के गांवों में लोग विनोबा को सरकारी सन्त कहते हैं। अब सरकारी भी सन्त हो सकता है ? सन्त तो सदा विद्रोही होता है, सन्त सरकारी नहीं होता है। इसका कोई मतलब ही नहीं हो सकता। सन्त अनिवार्य-रूपेण विद्रोही है, रिबेलियन तो उसके खून में होगा और जहाँ असत्य देखेगा, जहाँ बुराई देखेगा, लड़ेगा। लेकिन लड़े किससे ? मठाधीश गांधीवादी मुश्किल में पड़ा हुआ है। सरकार अपना है, लड़ना किससे है, तो लड़ नहीं सकता। तब सरकार के सहयोग से गांधी जिन्दगी भर असहयोग की बात किये और विनोबा और उनके साथी सरकार के सहयोग से क्रांति लाने की कोशिश में लगे हुए हैं। वह क्रान्ति नहीं आ रही है, सिर्फ सरकार के बचाव का उपाय बन रहा है, क्रान्ति नहीं आ रही है, केवल समाज का सड़ा गला व्यवस्था को "शाक एब्जार्बर" का काम कर रहे हैं, कोई धक्का न लगे समाज की पुरानी व्यवस्था को और लोगों को आशा बंधती है कि शायद इस तरह क्रान्ति हो जायेगी तो लोग चुपचाप बैठे हुए प्रतीक्षा कर रहे हैं। ये दो मठ हैं गांधीवादियों के। और मेरा मानना है इनसे यही होने को था इसलिए इनकी आलोचना का कोई अर्थ नहीं है। इनसे यही होने के और भी कारण हैं, वह भी समझ लेना जरूरी है।

मेरी अपनी मान्यता यह है कि हिन्दुस्तान के सारे महात्माओं ने आदर्श इतने ऊंचे रखे हैं कि सामान्य मनुष्य उन तक उठ ही नहीं सकता। आदर्श इतने ऊंचे रखे हैं कि सामान्य मनुष्य उनकी तरफ आँखें उठाकर के भी नहीं देख सकता है और इसका परिणाम यह हुआ कि हिन्दुस्तान में कुछ थोड़े से लोग, बड़े बड़े लोग पैदा हुए हैं और समाज हीन से हीन होता चला गया। अगर आदर्श असंभव होंगे तो समाज हीन हो ही जायेगा। **गांधी के आदर्श भी असम्भव की सीमा छूते हैं और असम्भव आदर्श प्रभावित कर सकते हैं, आकर्षित कर सकते हैं लेकिन आचरण में नहीं लाये जा सकते हैं।** हाँ कभी कोई एकाध आदमी आचरण में ला सकता है तो हम उसे आदर दे सकते हैं। जैसे सरकस में आप जाते हैं और एक आदमी रस्से पर चढ़कर दिखाता है तो हम तालियाँ पीटते हैं। वह सरकस देखने लायक काम है, इससे ज्यादा उसका उपयोग नहीं। ताली पीटी जा सकती है लेकिन अगर सारे लोग रस्से पर चलने की कोशिश करें तो सिवाय अस्पतालों के बिस्तर भरने के और कुछ भी नहीं होगा। महात्मा के नाम से चलने वाले जो प्राणी हैं, वे जीवन के रस्से पर चलने की कोशिश करते हैं। कुछ लोग अभ्यास से चल भी जाते हैं और लोग अगर आदर दे रहे हों तो कैसे भी अभ्यास से गुजरा जा सकता है। अगर आप एक आदमी को सिर के बल खड़े होने में आदर देने लगें और सारा बम्बई ताली पीटने लगे और उसे महात्मा कहने लगे तो वह आदमी फिर दो पैर पर खड़े होने की फिक्र छोड़ देगा। फिर वह सिर पर ही खड़े होने का अभ्यास जारी रखेगा। लेकिन उसके सिर के बल खड़े होने का मतलब यह नहीं होता कि सारे लोग सिर के बल चलने लगें। हिन्दुस्तान असम्भव आदर्शों के पीछे पड़कर अपने जीवन, अपने चरित्र सब को नष्ट कर रहा है।

गांधी जी ने फिर असंभव आदर्शों को हमारे सामने रख दिया। अहिंसा, अब्सल्यूट नानवायलेंस उनकी कल्पना में है पूर्ण अहिंसा उनकी कल्पना में है। सच बात तो यह है कि गांधी खुद भी पूर्ण अहिंसक नहीं हैं, न हो सकते हैं। कोई भी आदमी जिन्दा रहते हुए पूर्ण अहिंसक नहीं हो सकता। खुद गांधी भी नहीं हो सकते, गांधीवादियों की तो बात दूर है, खुद गांधीजी भी पूरे गांधीवादी नहीं हैं, न हो सकते हैं। जिन्दा रहना है तो हिंसा अनिवार्य है, जी नहीं सकते एक क्षण बिना हिंसा के, हिंसा होगी ही और जिन बातों को हम अहिंसा का नाम देते हैं वे भी हिंसा के ही रूप हैं। अगर मैं आपकी

छाती पर छुरा लेकर खड़ा हो जाऊं और आपसे कहूं कि जो मैं कहता हूं वह मान लो तो आप कहेंगे, आप हिंसा का उपयोग कर रहे हैं और मैं आपके घर के सामने अनशन करके बैठ जाऊं और कहूं कि मैं मर जाऊंगा, अगर मेरी बात नहीं मानते, तो मैं हिंसा का उपयोग नहीं कर रहा हूं ? मैं अब भी हिंसा का उपयोग कर रहा हूं। फर्क इतना है कि वह हिंसा आपकी तरफ जा रही थी, यह हिंसा मेरी तरफ जा रही है। वह हिंसा पर हिंसा थी, यह आत्महिंसा है। वह हिंसा सेडिस्ट थी यह मैसोचिस्ट है। यह खुद को ही मारने की धमकी है और ध्यान रहे गांधी जी ने जितनी बार खुद को मारने की धमकी दी, एक भी हृदय परिवर्तन नहीं हुआ। लेकिन गांधीजी मर न जायें, इस ख्याल से लोग झुक गये। डा. अम्बेडकर ने साफ कहा है कि मेरा हृदय जरा भी परिवर्तन नहीं हुआ लेकिन सिर्फ यह सोचकर कि गांधी जैसे कीमत का आदमी न मर जाय, मैं झुका हूं लेकिन मैं जो मानता था, अब भी मानता हूं, मेरा मानना वही है। गांधीजी अनशन करके किसी को झुका पाये ? किसी का हृदय परिवर्तन हुआ है ? लेकिन खुद मरने की धमकी देने से लोकमानस भयभीत हुआ। इतना अच्छा आदमी मर न जाय, इसे बचाने की हमने कोशिश की। मैं मानता हूं, यह भी हिंसा है, यह भी कायरपन है, यह भी जबरदस्ती दबाव है। गांधी जी खुद भी पूरे अर्थों में अहिंसक नहीं हैं, न हो सकते हैं। और यह भी ध्यान रहे, जब पूर्ण अहिंसा पर जोर दिया जायगा तो उसके परिणाम घातक होंगे। हिन्दुस्तान में गांधी जी ने पूर्ण अहिंसा पर जोर दिया और हिन्दुस्तान गांधी जी के आंखों के सामने इतनी बड़ी हिंसा से गुजरा जिसका कोई हिसाब नहीं। दस लाख आदमी हिन्दुस्तान के विभाजन में मरे। दस लाख आदमी उस आन्दोलन की पूर्णाहुति पर मरे जो अहिंसक था और खुद गांधी की भी हत्या हिंसा से हुई यह भी थोड़ा विचार लें। इसके पीछे कुछ कारण हैं।

मुझे ऐसा दिखाई पड़ता है कि जीवन का एक बहुत महत्वपूर्ण नियम है जो हमारे ख्याल में नहीं है। उस नियम को मैं कहता हूं "ला आफ रिवर्स इफेक्ट", उल्टे परिणाम का नियम। अगर मुझे तीर चलानी है तो प्रत्यन्चा को धनुषबाण के पीछे की तरफ खींचना पड़ेगा। अगर तीर को आगे पहुंचाना है तो तीर को पहले पीछे खींचना पड़ेगा। जितना तीर पीछे चला जाएगा उतना ही आगे जा सकता है। अब यह उल्टी बात है। तीर को आगे भेजना है तो पीछे क्यों खींचते हैं आप। अगर दीवाल पर गेंद आप मारते हैं जोर से तो जितने जोर से आप मारते हैं गेंद उतने जोर से आपकी तरफ वापस लौट आयेगी। हिन्दुस्तान हमेशा असंभव आदर्शों को थोपता रहा मनुष्य की चेतना पर। गांधी जी ने अहिंसा का असम्भव आदर्श आदमी पर थोपना चाहा। उसका एक ही परिणाम हो सकता था गेंद उल्टी दिशा में चली गई। हिन्दुस्तान अहिंसा की बातचीत सुनते सुनते भीतर हिंसा से भरता चला गया। जितनी हमने अहिंसा की बात सुनी उतनी भीतर हिंसा इकट्ठी होती चली गई। अहिंसा की बात सुन ऊपर से अहिंसा थोपी हमने दबाया, अहिंसक बनने की कोशिश की लेकिन कोई कभी अहिंसक बनने की कोशिश से अहिंसक हो सकता है ? हिंसा भीतर दबती चली गई, इकट्ठी होती चली गई। उसकी आग, उसका तूफान, ज्वालामुखी भीतर इकट्ठा हो गया। उसे निकालने की जरूरत पड़ गई। गांधी जी की जिन्दगी में ही हिन्दू मुसलमान के नाम से निकल गई। मैं मानता हूं कि हिन्दुस्तान की हिंसा का जिम्मा अन्ततः गांधी जी के ऊपर है। इतनी अहिंसा की बातचीत करनी, असम्भव आदर्शों की तरफ लोगों को खींचने के परिणाम बुरे होते हैं। अगर समाज को बहुत ज्यादा ब्रह्मचर्य की शिक्षा दी जाय तो उसका परिणाम कामुकता का बढ़ना होता है। सेक्सुअलिटी का बढ़ना होता है। और जो समाज जितनी ब्रह्मचर्य की शिक्षा में दीक्षित होगा उतना कामुक और सेक्सुअल हो जायगा। हमारा समाज हुआ है। और जो आदमी जितना सेक्स से लड़ेगा उतना कामुक हो जाएगा। और जो आदमी जितना हिंसा से लड़ेगा उतना हिंसक हो जाएगा। महावीर नंगे खड़े थे। उन्होंने सब छोड़ दिया और महावीर के पीछे जैनियों का, अनुयायियों का जो वर्ग खड़ा हुआ आप देखते हैं हिन्दुस्तान में सबसे ज्यादा धन जैनियों के पास है। महावीर ने धन छोड़

दिया। उनके अनुयायियों ने सब धन इकट्ठा कर लिया। महावीर नग्न खड़े थे। जबलपुर में जहां मैं रहता हूं मेरे एक मित्र की दुकान है वह महावीर को मानने वाले हैं। नग्न महावीर को मानने वाले हैं, दिगम्बर महावीर को। उनकी कपड़े की दुकान है दुकान का नाम है दिगम्बर क्लॉथ स्टोर। अब नंगों की कपड़े की दुकान का क्या मतलब है। महावीर नंगे थे और जैनी अधिकतर कपड़ा बेचने का काम करते है। कपड़ा बनाने का काम करते हैं, यह आकस्मिक नहीं है। इसके पीछे कारण है। हम चित्त को जिस दिशा में दबायेंगे चित्त उससे उल्टी दिशा में जाना शुरू हो जायगा। और यह नियम समझ लेना जरूरी है, अन्यथा महात्माओं से छुटकारा बहुत मुश्किल है। उनसे छुटकारा न हो तो उनके अनुयायियों से छुटकारा नहीं होगा, यह ध्यान रखना जरूरी है कि महात्मा अतिवादी तो नहीं है, एक्सट्रीमिस्ट तो नहीं है और सब महात्मा अतिवादी होते हैं। क्योंकि अतिवादी हुए बिना आप उनको महात्मा स्वीकार ही नहीं कर सकते। जब तक वे अति पर चले जायेंगे तब उनसे ठीक विपरीत अति वह पैदा करना शुरू कर देंगे। इसलिए दुनिया में हर महापुरुष के बाद पतन का एक काल आता है। **जिस समाज में महापुरुष पैदा होगा उस समाज में बीस पच्चीस तीस साल तक ह्रास और पतन का काल होगा।** हमेशा यह हुआ है। जीसस ने सिखाया कि जो तुम्हारे एक गाल पर चांटा मारे, तुम दूसरा गाल उसके सामने कर देना। और इसाईयों ने जितनी तलवार चलाई है उतना किसी और के अनुयायियों ने नहीं चलायी है।

मैंने सुना है एक आदमी था खूंखार, जंगली। उसने ईसा की बाइबिल पढ़ ली और उस बाइबिल में पढ़ लिया कि जो आदमी तुम्हारे एक गाल पर चांटा मारे तुम उसके सामने दूसरा कर देना। वह खूंखार जंगली आदमी था। उसने यह सिद्धांत मान लिया था। रास्ते से निकल रहा था। एक आदमी ने उसके गाल पर एक चांटा मार दिया। उसने दूसरा गाल उसके सामने कर दिया। उस दूसरे आदमी ने मौका देखकर दूसरे पर और जोर से चांटा मारा। उस जंगली ने उसकी गर्दन पकड़कर मरोड़ दी। आसपास के लोगों ने कहा कि तुम तो यह सिद्धांत मानते थे कि जो एक गाल पर चांटा मारे दूसरा उसके सामने कर देना। उसने कहा—दूसरा मैंने कर दिया। तीसरा मेरे पास नहीं है और तीसरे के बाबत् जीसस ने कुछ कहा भी नहीं है! जो मुझे करना है वह मैं करूंगा। आखिर मैं अपनी बुद्धि से भी चलूंगा न, एक सीमा के बाद।

गाँधीवादी अब अपनी बुद्धि से चल रहे हैं। गांधीजी की बुद्धि से चले। अब वे अपनी बुद्धि से चल रहे हैं। आखिर कब तक गांधी जी की बुद्धि से चलेंगे और वह बुद्धि अतिवादी है। इसलिए खतरा होना सुनिश्चत है। हिन्दुस्तान महात्माओं, साधुओं, सन्तों, अवतारों, तीर्थंकरों का देश है। जितने तीर्थंकर अवतार हमने पैदा किये हैं उतने दुनिया में किसी देश ने पैदा नहीं किये। होना यह चाहिए था कि हमारे देश का चरित्र सबसे ऊँचा होता लेकिन ऐसा नहीं हुआ। इसका कुछ कारण होना चाहिए। हमारे तीर्थंकर, हमारे अवतार, हमारे महात्मा सब अतिवादी हैं। वे एक्सट्रीम पर जीते हैं। वे वहां जीते हैं जहां आखिरी छोर है। और उस आखिरी छोर पर कोई आदमी कोशिश करके चाहे तो जी सकता है। लेकिन उसकी खुद की जिन्दगी भी बहुत तनाव, चिन्ता और परेशानी की जिन्दगी होगी। और उसके पीछे चलने वाले तो बहुत मुश्किल में पड़ जायेंगे। उसके पीछे चलने वाले को हिपोक्रेट होना ही पड़ेगा। उसके पीछे चलने वाले को पाखण्डी बनना ही पड़ेगा, क्योंकि वह इतने अतिवादी हो नहीं सकते। अतिवादी के पीछे चल पड़े हैं तो बातें वे करेंगे एक, जियेंगे ठीक दूसरे तरह से। जीना उनकी बातों से उल्टा होगा। इसलिए मेरा कहना यह है कि हमें अतिवाद से विचार करके बचने की जरूरत है। भारत की चेतना बहुत अति में जी चुकी।

कन्फ्यूसियस एक गांव में गये हुए थे। उस गांव

के लोगों ने उससे कहा कि हमारे गांव में भी एक बहुत बड़ा महात्मा है। आप उससे मिलें। कन्फ्यूसियस ने कहा बड़े महात्मा का क्या कारण है कि तुम उसे बड़ा कहते हो। तो इन लोगों ने कहा कि वह इतना विचारवान है कि एक छोटा सा काम करने के पहले तीन बार सोचता है। कन्फ्यूसियस ने कहा तीन बार जरा ज्यादा होगा, एकबार जरा कम होता है। दो बार काफी है। मैं उससे मिलने नहीं जाऊंगा। वह अतिवादी है। मैं तो गोल्डन रूल को मानता हूं। मैं तो स्वर्ण नियम को मानता हूं। बीच में चलने के अतिरिक्त और कोई बुद्धिमत्ता नहीं है। हीन आत्मा, अपरानी एक एक्सट्रीम पर चलता है। वह कहता है हिंसा ही नियम है। और महात्मा दूसरी अति पर चलता है। वह कहता है अहिंसा ही नियम है। जबकि जीवन बीच में चलता है जहाँ अहिंसा और हिंसा के मध्य एक रास्ता खोजना होता है। न तो पापी को नियम बनाया जा सकता है और न महात्मा को नियम बनाया जा सकता है। गाँधी ने भारत की जो पुरानी भूल थी उसको फिर दोहरा दिया है। लेकिन गांधी इसीलिए सफल भी हो सके, इसीलिए भारत के मन को वे प्रभावित भी कर सके। क्योंकि भारत की जो पुरानी बीमारी थी वह उसमें बिल्कुल ही मौजूं बैठ गये। भारत की पुरानी बीमारी अतिवाद की है। आखिरी पूर्णता की हमारी बीमारी है और उस पूर्णता की बीमारी को हमने सब दिशाओं में बढ़ाने की कोशिश की है। अपरिग्रह तो पूर्ण। फिर हम वस्त्र भी नहीं पहनेंगे। वस्त्र भी परिग्रह है। धन तो, पूर्णतया उससे छुटकारा चाहिए। तो हम निर्धन हो जायेंगे। शरीर का विरोध तो अंतिम सीमा तक होगा। यहाँ जो शरीर के विरोधी हैं असली, उन्होंने मृत्यु की भी आज्ञा दी है। कोई आदमी आत्म-हत्या करना चाहे तो कर सकता है। आत्म हत्या का उन्होंने विरोध नहीं किया है। क्योंकि वे कहते हैं कि हत्या तो शरीर की होती है। अगर कोई आदमी शरीर को खत्म करना चाहे तो करे, क्योंकि शरीर हमारा दुश्मन है। उस सीमा तक हम अति पर गये और वही अति गांधी ने फिर दोहरा दी। हमें बहुत ठीक मालूम पड़ी। हमारे चित को बहुत प्रभाव हुआ। हमने कहा ठीक, वह आदमी आ गया जो हमारी भारतीय संस्कृति का प्रतीक है। प्रतीक वह थे लेकिन भारतीय संस्कृति बीमारी है। वह बीमारी के ही प्रतीक थे। भारतीय संस्कृति पाखण्डी है, भारतीय संस्कृति सीजोफ्रेमिक है, जिसको हम कहें, आदमी को दो हिस्सों में तोड़ देने वाली है। पूरे आदमी को स्वीकार नहीं करती। अगर आप खाना खाते हैं तो भारतीय संस्कृति कहती है कि अस्वाद से खाना, स्वाद मत लेना। गांधी जी भी यही समझाते थे। वे कहते थे भोजन तो करो लेकिन स्वाद मत लेना। आदमी को आप पागल करना चाहते हैं? स्वाद-स्वाद आदमी क्यों न ले। स्वाद बराबर ले। और मैं कहता हूं पूर्णतया स्वाद ले। और जितना गहरा स्वाद ले सके उतना विकसित आदमी है, उतना रीफाइन, उतन कल्चर्ड, उतना सुसंस्कृत आदमी है। जितना गहरा स्वाद ले सके और मैं यह भी मानता हूं कि जो आदमी भोजन में जितना ज्यादा स्वाद लेगा वह भोजन से उतना ही मुक्त हो जाएगा। उसकी भोजन की चिन्ता उतनी ही छूट जाएगी और अस्वाद वाला आदमी भोजन करते वक्त अकड़कर बैठेगा कि स्वाद लेना नहीं है और जब कर चुकेगा तो चौबीस घण्टा स्वाद का ख्याल आता रहेगा। जो नहीं लिया वह पीछा करेगा। मैं मानता हूं स्वाद लेना, पूर्णतया लेना। यह अस्वाद की बात बेईमानी है और खतरनाक है। जीवन में सारे सुख का विरोध है। गांधी का भी विरोध है। किसी भी तरह के सुख के वे विरोधी हैं। दुख का वरण है। जो आदमी जितना दुख का वरण करे, गद्दी को छोड़कर नीचे बैठ जाय, हम कहेंगे उतना बड़ा आदमी है। कपड़े उघाड़ के धूप में बैठ जाय, सर्दी में खड़ा हो जाय, हम कहेंगे उतना त्यागी तपस्वी है। हम दुखवादियों को आदर देते हैं। दुख को हम तपस्चर्या कहते हैं और दुख मनुष्य के स्वभाव के प्रतिकूल है। कोई आदमी दुख नहीं चाहता। कोई आदमी दुख चाहता हो नहीं जब तक कि आदमी मानसिक रूप से बीमार न हो। तब तक कोई आदमी

दुख नहीं चाहता है, सुख चाहता है। और मैं समझता हूं कि अगर हमने दुख चाहने की व्यवस्था सिखायी तो आदमी पाखण्डी हो जाएगा। ऊपर से वह कहेगा ठीक है तपस्चर्या, त्याग, और भीतर से ? भीतर से वह सुख के रास्ते खोजेगा। इसलिए जैसे महात्मा विदा होगा उसके दबाये हुए स्टार्व, भूखे जो अनुयायी होंगे वे ठीक उल्टे सिद्ध होंगे। अगर महात्मा ने समझाया था कि झोपड़े में रहना तो वह महल में रहना शुरू करेगा। क्योंकि महात्मा के डर में, प्रभाव में, महात्मा के असर में उन्होंने किसी तरह झोपड़े में रहने को अपने को राजी कर लिया था। मन उनका महल मांगता था और मैं मानता हूं कि हर आदमी का मन महल मांगता है। **और हमें एक ऐसी दुनिया बनानी चाहिए जो हर आदमी को महल दिला सके। झोपड़े में रहना सिखाने की जरूरत भी क्या है। झोपड़े में रहना सिखाने की शिक्षा ही गलत है। उसका एक ही मतलब हो सकता है कि हम आदमी को उसके स्वभाव के विपरीत ले जायें फिर वह आदमी मौका पाकर अपने स्वभाव की पूर्ति करे।** आज दिल्ली में वाइसराय तो चला गया लेकिन उसके महल बच गये। उनके महलों में गांधीवादी जो झोपड़े में रहने की इच्छा रखता था वह उन महलों में रह रहा है। हालाँकि वह उसमें भी तरकीबें निकालता है। पहले राष्ट्रपति जब राजेन्द्र बाबू हुए तो मैं दिल्ली गया। उनका महल देखने गया। जिस कमरे में वह बैठते थे वह देखकर हैरान हुआ। उस कमरे को दिखाने वाले आदमी ने मुझे कहा कि राजेन्द्र बाबू कितने तपस्वी, कितने सादे आदमी हैं। देखते हैं आप ? मैंने कहा मुझे दिखाई नहीं पड़ता यह क्या किया गया। महल में वाइसराय की बैठक में चटाई लगा दी गई है चारों तरफ। झोपड़ा हो गया यह। महल वही है। दीवाल पर चटाई और जड़ दी गई, सादगी हो गई। मैंने कहा यह पागलपन के लक्षण हैं। महल में रहना हो, महल में रहो। यह महल के भीतर झोपड़ा कैसे बन गया। ईमानदारी और सच्चाई होनी चाहिए। झोपड़ी में रहो तो झोपड़े बहुत हैं। झोपड़े की हमारे मुल्क में कभी नहीं है। आप झोपड़े में रहो। लेकिन यह वाइसराय का महल जहां एक हजार नौकर दिन रात काम कर रहे हैं वहां आप झोपड़े में रहने का मजा भी ले रहे हो और महल में भी रह रहे हो। यह दोनों बातों में कुछ मेल नहीं खाता। लेकिन मेल खायी है। वह जो भीतर द्वन्द हमने पैदा करवाये हैं आदमी में वह मेल खाता है।

तो गांधी ने सिखाया है मोटे कपड़े पहनो, खादी के कपड़े पहनो। खादी बारीक से बारीक होती चली गई। आज खादी हिन्दुस्तान में सबसे मंहगा कपड़ा है। उससे मंहगा कोई कपड़ा नहीं। आज खादी सिर्फ वे ही पहन सकते हैं जो कपड़े के सम्बन्ध में मंहगी से मंहगी चीज का मजा लेना चाहते हैं। बाकी कोई नहीं पहनता। खादी पहननी तो मंहगी से मंहगी चीज है और गांधी ने मोटी खादी बनायी थी और यह पतली खादी कैसे होती चली गई। मनुष्य का स्वभाव मोटा कपड़ा पहनने की इच्छा नहीं रखता है। मैं मानता हूं, क्यों पहने मोटा कपड़ा ? अगर स्वभाव कहता है कि पतला और रेशमी कपड़ा सुखद है तो आदमी इस दुनिया में इसलिए पैदा हुआ है कि वह सुख ले। उसे दुख झेलने की जरूरत क्या है और हम इस तरह की दुनिया बनाने की कोशिश करें जहां अधिकतम लोगों को रेशम मिल सके। आदमी का मन चाहता है रेशमी कपड़े और चाहेगा। अगर आपकी चमड़ी खादी की तरह खुरदुरी हो तो कोई आदमी को चमड़ी पर हाथ फेरने को राजी नहीं होगा। रेशमी जैसी हो तो सुखद होगी। और हमें एक ऐसी दुनिया बनानी चाहिए जहाँ हर बच्चे की चमड़ी रेशम जैसी सुखद हो। हर बच्चे को रेशम मिल सके, अच्छा मकान मिल सके। हर आदमी के मन की जो आकांक्षाएं हैं उनकी अधिकतम पूर्ति उपलब्ध हो सके। गांधी ने जो फिलोसिफी सिखायी है मनुष्य को, वह थी अतृप्ति के भीतर सुख लेने की। अब हम आदमी को शीर्षासन करना सिखा रहे हैं। व्यर्थ इसका कोई प्रयोजन नहीं है। इसका खतरा होगा और इसका खतरा भोगना पड़ेगा अनुयायियों को। महात्मा तो बिदा हो जायेंगे, वे ही फंस जाएंगे। और उनकी दिक्कत होगी। और सारे लोग कह देंगे कि देखो महात्मा के सिद्धान्तों को गलत कर

रहे हो। मैं आपसे कहता हूं, महात्मा का सिद्धान्त कोई गलत नहीं कर रहा है। महात्मा के सिद्धान्त ऐसे हैं कि ये बेचारे आदमी उस चक्कर में पड़कर अपने आप गलत हुए चले जा रहे हैं। यह गलत होंगे ही। इस देश में कभी भी नैसर्गिक मनुष्य को स्वीकृति नहीं दी है। वह जो हमारा निसर्ग है, हमारा जो प्राकृतिक व्यक्तित्व है, वह जो हमारी आत्मा है उसका जो सहज सुख है उसकी हमने कभी स्वीकृति नहीं दी। हम उससे उल्टी बातों को आदर देते हैं। उल्टी बातें कुछ लोग पूरी कर लेते हैं। उनको हम आदर और महात्मा और तपस्वी कहने लगते हैं। फिर प्रभावित होकर हम भी इकट्ठे होते हैं और हम कठिनाई में पड़ जाते हैं। हमारा व्यक्तित्व स्प्लिट पर्सनल्टी है, टूट गया है। चाहता कुछ और है भीतर से, ऊपर से कुछ और चाहा जाता है। सिद्धान्त ऊपर कुछ और है। तब दोनों के बीच उपद्रव शुरू हो जाते हैं। और तब ऐसा होता है कि एक कदम इस दिशा में जाते हैं दो कदम पिछली दिशा में जाना पड़ता है।

मैंने सुना है एक बच्चा एक दिन स्कूल में आया और शिक्षक ने कहा कि चूंकि उसे बड़ी देर हो गई है और शिक्षक ने उससे पूछा, इतनी देर कैसे लगा दी। तो उसने कहा, देखते नहीं बाहर पानी पड़ रहा है। मैं एक कदम आगे चलता था और दो कदम पीछे खिसक जाता था। ऐसी कीचड़ मची हुई थी। शिक्षक ने कहा, इतनी कीचड़ ? कि तू एक कदम आगे चलता था और दो कदम पीछे खिसक जाता था तो फिर तू यह बता स्कूल तक पहुंचा कैसे, क्योंकि एक कदम आगे चलेगा और दो कदम पीछे जाएगा तो स्कूल पहुंचा कैसे। उसने कहा, जब मेरी समझ में आया तो मैंने घर की तरफ चलना शुरू कर दिया तब मैं स्कूल पहुंच गया।

इस देश को घर की तरफ चलना शुरू करना पड़ेगा। नहीं तो एक कदम चलते हैं तपश्चर्या की तरफ और दो कदम पीछे खिसक जाते हैं। खींच तान के आगे बढ़ते हैं दुगुने पीछे खिसक जाते हैं और दोष हमेशा यह देते हैं कि हमारी कोई गलती है। हमारी गलती नहीं है। हिन्दुस्तान में जो गांधीवादी हैं उनकी कोई गलती नहीं है। गलती है तो सिर्फ एक वह समझ नहीं पा रहे हैं कि आदमी का स्वभाव क्या है और हमारी मांग क्या है। हमारी मांग गलत है। सारी दुनिया धीरे-धीरे नैसर्गिक मनुष्य को स्वीकार करने के करीब आ रही है। वे स्वस्थ होते चले जा रहे हैं। हम अस्वस्थ हुए चले जा रहे हैं। हम पांच हजार साल से अस्वस्थ हैं और हमारा अस्वास्थ्य बढ़ता ही चला गया और हमारे सब महात्मा हमारे अस्वास्थ्य को बढ़ाने वाले हैं। क्योंकि वे अति का आग्रह करते हैं और निसर्ग के प्रतिकूल जाने का आग्रह करते हैं कि उल्टे जाओ सीधे मत जाओ। सीधे कोई काम उन्हें पसन्द नहीं है। ठीक कपड़े पहनो तो वे नाराज हैं, ठीक खाना खाओ तो वे नाराज हैं, ठीक मकान में रहो तो वे नाराज हैं।

मैंने सुना है गांधीजी जेल में थे और बल्लभ भाई पटेल भी उनके साथ थे। गाँधीजी रोज सुबह दस छुहारे फुला के खाते थे। बल्लभभाई ने सोचा कि बूढ़े आदमी, हड्डियां निकलती जा रही हैं। कुछ थोड़ा ज्यादा नाश्ता हो तो ठीक रहेगा। फिर उन्होंने सोचा और छुहारे दस की जगह बारह फुला दिये। क्या हर्जा, कौन हिसाब रखता है। उनको पता नहीं गांधी जी ने छुहारे पहले गिने। दूसरे दिन जब उन्होंने बारह फुला दिये गिने बारह निकले तो गांधी जी ने कहा ये बारह क्यों फुलाये गये। मैं तो दस ही खाता हूं। बल्लभभाई पटेल ने कहा कि दस और बारह में क्या फर्क है। जैसे दस वैसे बारह। तो गांधीजी थोड़ी देर आंखें बन्द करके बैठ गये और चार छुहारे उठाकर अलग रख दिये और उन्होंने कहा जब दस और बारह में कोई फर्क नहीं है तो आठ और दस में भी कोई फर्क नहीं है। अब मैं आठ ही खा लूंगा। उस दिन से वे आठ ही छुहारे खाने लगे। यहां समझने की जो बात है, बल्लभभाई दस की जगह बारह रखना चाहते हैं, गांधी जी दस की जगह आठ कर लेते हैं। अब बल्लभभाई दलील कुछ भी नहीं दे पाते। क्योंकि जब दस और बारह में कोई फर्क नहीं तब आठ और दस में भी कोई फर्क नहीं। फिर छः और आठ

में कोई फर्क नहीं होता। गांधीजी को थोड़ा और आगे जाना चाहिए। फिर चार और छः में भी कोई फर्क नहीं होता। फिर दो और चार में भी कोई फर्क नहीं होगा। और फिर शून्य में और दो में भी क्या फर्क है? अगर यह गिनती ऐसी हो जाय तो शून्य पर ले जाने वाली है। अगर बल्लभभाई में गणित जाये तो अनन्त पर ले जाने वाला है और मैं मानता हूं यह सिकोड़ने वाला गणित गलत है। खतरनाक है। फैलाव चाहिए, विस्तार चाहिए और जितना फैलाव और विस्तार की दृष्टि होगी उतना आदमी स्वस्थ होगा। क्योंकि उसके अनुकूल हगा। जीवन का सारा लक्षण फैलाव का है। एक बीज आप बोते हैं, एक बड़ा वृक्ष बीज से निकलता है। बीज से बहुत बड़ा वृक्ष निकलता है फिर एक वृक्ष में करोड़ों बीज निकलते हैं। इतना फैलाव हो गया है एक बीज का। फिर एक बीज बोइये, फिर एक वृक्ष, फिर करोड़ों। जीवन फैलता चला जाता है, जीवन विस्तार है। और यहां हिन्दुस्तान का महात्मा सिखाता है संकोच, सिकुड़ जाना बन्द हो जाना। क्लोजिंग जीवन के विरोध में है। सिकुड़ना, जितना आप सिकुड़ेंगे उतना जीवन इन्कार करेगा। जीवन जगह जगह से तोड़कर बाहर निकलेगा और अगर सिकोड़ने का बहुत आग्रह किया तो जीवन गलत जगह पर मौका पाकर तोड़कर निकल जायगा। तब तकलीफ शुरू होगी। दरवाजा है और हमने इन्कार कर दिया है कि दरवाजे से निकलना पाप है तो फिर आप करोगे क्या। निकलना तो पड़ेगा। फिर दीवालें तोड़कर निकलेंगे आप।

हिन्दुस्तान में जहां-जहां नैसर्गिक दरवाजा हो सकता है, मनुष्य के निकास का, सब जगह पुलिस वाले बिठाये हुए हैं। वहां से नहीं जा सकते। वहां से गये कि नर्क में पड़ गये। तो फिर आदमी जायगा कहीं फैलेगा। तब वह गलत जगह से चोरी के रास्ते दरवाजे छोड़कर दीवाल से निकल जायगा। जब दीवालों से निकलेगा तो कहेगा करप्शन बढ़ रहा है। जब दीवालों से निकलेगा तो कहेगा भौतिकवाद बढ़ रहा है। जब दीवालों से निकले तो कहना, आदमी का पतन हो रहा है। संस्कृत का जो शब्द है ब्रह्म, परमात्मा के लिए ब्रह्म का अर्थ है विस्तार। वह जो सदा एक्सपेंडिंग है, सदा फैलता रहता है। अगर आप आइंस्टीन से परिचित हैं तो पता होगा आइंस्टीन ने कहा है कि सारी दुनिया भी फैल रही है। तारे एक दूसरे से प्रतिपल करोड़ों मील की रफ्तार से भागे चले जा रहे हैं। एक्सपेंडिंग युनिव्हर्सल सब चीजें चल रही हैं। इस फैलते हुए जगत में जहाँ सब फैलने को आतुर हैं आप भी फैलने को आतुर हैं। हर आदमी फैलने को आतुर है। जहाँ फैलने की आतुरता निसर्ग का नियम है वहाँ सिकोड़ना हमारा सिद्धान्त है कि सिकोड़ो। आठ और दस में क्या फर्क है, छः और आठ में क्या फर्क है. शून्य और दो में क्या फर्क है। सिकुड़ते चले जाओ और जब शून्य पर आदमी को खड़ा कर दोगे, उस आदमी को भी भूख लगती है तब फिर वह क्या करे। तब वह चोरी से खाना खायेगा हम जीवन की सहज चीजों से ही आदमी को मजबूर करते है कि वह चोर हो, बेईमान हो जाये। जीवन की सरलतम उपलब्धियों के लिये हम इतनी बाधाएं खड़ी कर देते हैं कि सिवाय व्यभिचारी और भ्रष्टाचारी हो जाने के कोई उपाय न रहे। लेकिन हमें यह दिखाई नहीं पड़ता। और जब हमें यह सब दिखाई पड़ता है तो हम और जोर से रोकने की कोशिश करते हैं।

मैं दिल्ली गया। एक बड़े साधु एक बड़ा सम्मेलन करते थे। सम्मेलन हो रहा था। अश्लील पोस्टर जो लगाये जाते हैं दीवालों पर उनके खिलाफ कि अश्लील पोस्टर नहीं लगाये जाने चाहिए। भूल से मुझे भी बुला लिया। कुछ लोग मुझे भूल से बुला लेते हैं। उन्होंने कहा आप भी समझाइये लोगों को कि अश्लील पोस्टर नहीं लगाये जायें। मैंने उनसे कहा, तुम साधु हो। तुम्हें अश्लील पोस्टर देखने की क्या जरूरत। आप काहे के लिए अश्लील पोस्टर देखने जाते हैं। और जिनको देखना है उन पर रोक लगाने में किसी को क्या हक है। सवाल यह नहीं है कि अश्लील पोस्टर लगें। सवाल यह है कि आदमी अश्लील पोस्टर क्यों देखना चाहता है। और मैंने उनसे कहा, महात्माओ तुम्हीं कारण हो अश्लील पोस्टर

के दिखाने वाले तुम्हीं हो। उन्होंने कहा क्या मतलब ? हम ? हम तो सदा विरोध में हैं। हम कैसे कारण हो सकते हैं। लेकिन वह ला आफ रिवर्स इफेक्ट उनको पता नहीं है। वह कहते हैं हम तो विरोध में हैं, हम कहते हैं आँख बन्द करो, स्त्री को देखो ही मत। हम कहाँ अश्लील पोस्टर का पक्ष कर रहे हैं। लेकिन जो काम सिखाइयेगा आँख बन्द रखो, देखो मत। फिर आँख तिरछी कर स्त्री को देखना पड़ेगा। फिर अश्लील पोस्टर देखना पड़ेगा। फिर गन्दी किताब, गीता के बीच रखकर पढ़नी पड़ेगी। कवर गीता का रखना पड़ेगा, गन्दी किताब पढ़नी पड़ेगी। वह अनिवार्य हो जाएगा, क्योंकि हम जो व्यवस्था दे रहे हैं वह खतरनाक है। अभी आपने अखबारों में पढ़ा होगा कि सिडनी में एक अमेरिकन नग्न अभिनेत्री को प्रदर्शन के लिए बुलाया था। उस बड़े हाल में जिसमें दो हजार लोग बैठ सकते थे और उस बड़े नगर में जहाँ बीस लाख की आबादी हो, केवल दो आदमी उस नंगी औरत का नाच देखने आये। उस नंगी औरत को दो आदमी देखकर सर्दी लग गई, ठंडी रात थी। नंगा नृत्य उसको करना पड़ा और दो आदमी को देखकर नृत्य करने का मजा भी चला गया। और लोग होते तो गर्मी होती। प्रशन्सा होती थोड़ी गर्मी होती। वह सब गड़बड़ हो गया। उसे सर्दी पकड़ गई और आयोजक मुश्किल में पड़ गये। कोई देखने नहीं आया। हिन्दुस्तान में इस नंगी औरत का प्रदर्शन करवाइये। बम्बई में करवाइये तो दो आदमी आयेंगे देखने ? दो आदमी पाछे रह जायें तो मुश्किल है। और यह मत सोचना कि बुरे आदमी आयेंगे देखने। हो सकता है बुरे आदमी न भी आयें। लेकिन अच्छे सब आ जायेंगे। तो एक फर्क होगा, अच्छे आदमी सीधे रास्ते नहीं आयेंगे। सामने के दरवाजे से नहीं आयेंगे। पीछे मैनेजर से व्यवस्था करेंगे, अगर पीछे रास्ते हमारे लिये हैं तो हम चुपचाप आकर देख लें, कोई हमें न देख पाये। लेकिन सब आ जायेंगे। क्यों ? इतना प्रताड़ित किया हुआ है हमने, इतनी सप्रेशन, इतना दमनकारी हमारा विचार है कि वह चित्त को उल्टी तरफ ले जाता है जितना दमन होगा उतना आदमी कामुक होगा। दमन कौन करवा रहा है। सारे महात्मा मिलकर दमन करवा रहे हैं।

गांधीजी ने फिर दमन की फिलासफी हमें दे दी। एक सप्रेसिव मारेलिटी का फिर ख्याल हमें दे दिया। हर चीज का दमन करने का भाव दे दिया। इतना दमन उन्होंने करवाया अपने अनुयायियों से पिछले तीस-चालीस सालों में कि उसका बदला ले रहे हैं उनके सब अनुयायी। उसका बदला ले रहे हैं कि ठीक है बहुत दमन कर लिया। अब आखिरी जिन्दगी में थोड़ा तो आराम करने दो। जो जो दमन करवाये गये थे वही वही उनसे फूटकर निकल रहे हैं। तो मेरा मानना है कि गांधीवादी कहाँ हैं। इसको इस तरह मत पूछें। गांधीवादी जहाँ हैं वह इस बात का सबूत है कि गांधी जी की जो विचार दृष्टि थी वह यहीं ले जा सकती थी। वह और कहीं नहीं ले जा सकती थी। जीवन के सत्य को समझने का साहस ही हमने खो दिया है। जीवन के सत्य बहुत और हैं। अति नहीं है जीवन का सत्य। जीवन का सत्य अत्यन्त मध्य का सूत्र है। और जीवन के सत्य सिकोड़ने वाले नहीं हैं। जीवन के सत्य विस्तार करने वाले हैं। रवीन्द्र नाथ की फोटो आपने देखी ? गांधी जी की फोटो आपने देखी ? गांधी जी एक कपड़े को ऐसे लपेटे पहने हुए हैं कि अगर उसमें कम में काम चल जाय तो उससे और चिन्दी फाड़कर अलग कर दें। उसमें उससे कम में और नहीं चल सकता काम। इसलिए लपेटे हुए हैं। रवीन्द्र नाथ की फोटो आपने देखी। वह इतना बड़ा कोट पहने हुए हैं कि उसमें दो चार गांधी जैसे आदमी और अन्दर समा जायें और वह कोट जमीन छू रही है। रवीन्द्र नाथ ने कहा है कि समृद्धि चाहिए, हर चीज ज्यादा चाहिए ताकि भीतर कहीं भी मन को सिकोड़ने का कोई कारण न रह जाय। हर चीज ज्यादा चाहिए। मनोवैज्ञानिक भी कहते हैं अगर आप बाजार साबुन खरीदने जाते हैं तो बजाय हर महीने एक साबुन खरीदें। एक दिन बारह साबुन इकट्ठे खरीद लायें। आप ज्यादा फैला हुआ अनुभव करेंगे। बारह साबुन आपने खरीदे हैं कुछ संकोच नहीं है। कोई सिकोड़ नहीं है। आप घर आते हैं। आप ज्यादा फुलफिल लगेंगे कि ज्यादा पूरे आप हैं। जिन्दगी फैलाव माँगती है। गरीबी का दुख क्या है। गरीबी का

दुख भूख नहीं है। गरीबी का दुख असली में यह है कि हर जगह सीमा है। इसलिए फैल नहीं सकते। अगर मैं किसी को प्रेम करता हूं और दो पैसे की चीज भेंट करना चाहता हूं तो नहीं कर सकता। भूख तो सही जा सकती है लेकिन किसी को दो पैसे की चीज भी देने की हिम्मत भी मैं नहीं जुटा पाता हूं तो बस सिकुड़ गई आत्मा। मैं मुश्किल में पड़ गया। गरीबी का सबसे बड़ा दुख यह है कि सब तरफ सीमाएं हैं कहीं से बड़ी सीमा आ जाती है। धन का सबसे बड़ा सुख क्या है? धन का सबसे बड़ा सुख यह नहीं है कि आपकी तिजोरी में धन भर गया तो आप बहुत आनन्दित हैं। धन का सबसे बड़ा सुख यह है कि आप की सीमाएं जरा दूर हो गई हैं। आप कुछ कर सकते हैं हाथ फैला सकते हैं। एक छोटे मकान में एक आदमी रहता है। वह छोटे मकान में रहेगा तो उसका मस्तिष्क धीरे-धीरे छोटा होता चला जाएगा। एक फैलाव चाहिए, एक बड़ा भवन चाहिए, एक बड़ा कमरा चाहिए जहां आदमी फैल सके। घूम सके, चल सके, हिलडुल सके। लेकिन हिन्दुस्तान में जो अब तक का दर्शन फिलासफी विकसित किया है वह ऐसा सिकोड़ने वाला है कि सब तरफ जंजीरें हैं और सब तरफ जंजीरों को हमने कसकर पकड़ लिया है और जितना जो आदमी इन जंजीरों को पकड़ता है हम कहते हैं उतना महान है। क्यों कहते हैं महान है। महान सिर्फ इसलिए कहते हैं जो प्रकृति के प्रतिकूल चल रहा है? उल्टा चल रहा है? और क्या महानता है? लेकिन प्रकृति के प्रतिकूल चलना महानता है? प्रकृति के प्रतिकूल चलना पागलपन है और उस पागलपन से आदमी टूट सकता है, मिट सकता है, नष्ट हो सकता है। फिर यह हो सकता है एकाध सर्कस का खेल साध लें। लेकिन जब पूरा समाज इस तरह का कार्य करने लगे तो बड़ी मुश्किल खड़ी हो जाती है।

मेरी दृष्टि में गांधी पर पुनर्विचार की जरूरत है गांधीवादियों की हालत देखकर, जैनियों की हालत देखकर महावीर पर पुनर्विचार की जरूरत है। इसाईयों की हालत देखकर जीसस पर पुनर्विचार की जरूरत है। और अगर हम पूरी दुनियां की आज तक की हालत देखें तो हमें ओल्ड माइंड, जो पुराने मस्तिष्क थे उनपर पुनर्विचार की जरूरत है। उसमें बुनियादी भूल थी, वह अहिंसा की बात करता था और हिंसा पैदा होती थी, वह प्रेम की बात करता था और घृणा खड़ी होती थी। वह अपरिग्रह की बात करता था, परिग्रह बढ़ता था, वह निर्धनता की बात करता था और धन इकट्ठा होता था। वह पुराना पूरा मस्तिष्क उल्टे परिणाम ला रहा था। जो वह कहता था उससे उल्टा होता था। वह कहता था कि स्त्रियों से दूर, स्त्री पुरुष अलग अलग और स्त्री पुरुष का दिमाग सेक्स से भरता चला जाता था।

मेरे एक मित्र डाक्टर हैं दिल्ली के। वह कुछ पहले लंदन में एक कांफ्रेंस में भाग लेने गये। एक मेडिकल कान्फ्रेंस थी यूरोप के डाक्टरों की। एशिया से भी कुछ डाक्टर गये थे। वे भी गये थे। मैं उनसे कुछ कह रहा था। उन्होंने एक घटना बतायी मुझे। वह कहने लगे, मैं बड़ी मुश्किल में पड़ गया। एक पार्क में पाँच सौ डाक्टरों के लिए मिलने जुलने, कुछ खाना पीना गपशप की बैठक थी। वे सारे लोग इकट्ठे हुए हैं और गपशप कर रहे हैं। ये मित्र डाक्टर सरदार हैं। वे भी वहां गये हुए हैं लेकिन इनका मन उस बातचीत में नहीं लगता है, पार्क में एक बेन्च पर एक झाड़ के नीचे एक युवक और एक युवती दोनों एक दूसरे से गले में हाथ डाले आखें बन्द किये कहीं खो गये हैं। इनके प्राण तो घूम फिरकर वहीं चले जाते हैं। भारतीय दिमाग और कहीं जा नहीं सकता। उनको परेशानी यह होती है कि कोई पुलिस वाला आकर इनको उठाता क्यों नहीं है कि पब्लिक पार्क में, ऐसी खुली जगह में ये क्या हो रहा है। यह कोई प्रेम करने की जगह है? प्रेम तो दरवाजा बंद करके करना चाहिए। यह तो इतने लोग जहां इकट्ठे हों, कोई रोकता क्यों नहीं। और उनका ध्यान बार बार वहीं जा रहा है। सारा रस उनका बदल गया। पास में एक डाक्टर हैं जर्मनी का। उसने उनके कंधे पर हाथ रखा और कहा कि आप बार बार उधर मत देखिये। हो

सकता है कि पुलिस वाला आकर उठाकर आपको ल जाय क्योंकि यह बहुत अशिष्ट और संस्कारहीन बात है। उन्होंने कहा, मुझे, उनको ले जाना चाहिए। उन्होंने कहा, उनसे कोई संबंध नहीं और मेरे मित्र डाक्टर ने कहा कि इतनी खुली जगह ये लोग क्या कर रहे हैं तो उन्होंने कहा, वे जानते हैं कि यहां पार्क में शिक्षित लोग इकट्ठे होने वाले हैं, इससे क्या प्रयोजन है किसी का। वे अपने काम में हो सकते हैं, हम अपने काम में हो सकते हैं। आप क्यों परेशान हैं।

लेकिन हमारा जो चित्त है वह दमन से भरा हुआ है और जो-जो हमने दबाया है वही वही हमें चारों तरफ दिखायी पड़ना शुरू हो जाता है। गांधीजी ने फिर दमन हमें सिखाया सब बातों में दमन। हिंसा को दबाओ, हिंसा बुरी है। घृणा को दबाओ, घृणा बुरी है, परिग्रहको दबाओ परिग्रह बुरा है। धन को दबाओ, धन बुरा है। सुख को दबाओ, सुख बुरा है। और दबाने का एक ही मतलब हो सकता था, जो हुआ है कि जो जो दबाया था वह सब फूटकर बाहर आया है। जैसे मवाद फोड़े में भरी हो और ऊपर से पट्टी लगाकर दबा दो। वह फूटकर निकलेगी पूरी तरह से शरीर से निकलेगी। जो दबाया था गांधीवादियों ने परिणाम पूरा मुल्क भोग रहा है। दबाया था उन्होंने, लेकिन वे सत्ता में पहुंच गये और उनका मवाद पूरे मुल्क पर फैल गयी है। क्या इसका मतलब कि मैं यह कहता हूं कि हिंसा को दबाओ मत, हिंसा करो, क्या मैं यह कहता हूं कि वासना में डूब जाओ, क्या मैं यह कहता हूं क्रोध करो, हिंसा करो, घृणा करो। नहीं मैं यह नहीं कहता हूं, मैं यह कहता हूं दबाओ मत, जानो, पहचानो, समझो और मैं यह कहता हूं कि अगर समझी गयी हिंसा तो एक और तरह की अहिंसा व्यक्तित्व में आनी शुरू होती है, एक और ही तरह की। अगर मैं अपनी हिंसा को समझूं, पहचानूं, खोजूं, और देखूं कि मेरी हिंसा मुझे ही दुख लाती है और मेरे ज्ञान और मेरी समझ के बढ़ने से मेरी हिंसा धीरे-धीरे कम हो तो मैं दबाता नहीं और तब धीरे-धीरे अहिंसा बढ़नी शुरू होती है। मैं अहिंसा को बढ़ाता नहीं, मैं हिंसा को दबाता नहीं, समझ को बढ़ाता हूं। समझ बढ़ती है हिंसा कम होती है, अहिंसा बढ़ती है। लेकिन ऐसा आदमी खतरनाक नहीं होगा। क्योंकि दबायी नहीं है हिंसा जो मौका पड़ने पर फूट निकले। मैं कहता हूं सेक्स को समझो, दबाओ मत--समझो, पहचानो, खोजो, जियो और उस समझ से जितना सेक्स विलीन हो जाय, शुभ है। फिर वह सेक्स वापस नहीं लौटेगा और अगर दबाया तो वह प्रतीक्षा करेगा, आज नहीं कल, मौका पाते ही वापस लौट आयेगा। धन को जियो, समझो और जो आदमी धन में जियेगा वह धन को न तो पकड़ेगा, न छोड़ेगा। धन अर्थों में सिर्फ एक माध्यम हो जायेगा। और वह आदमी धन से एक बाहर हो जायेगा। वह धन को जियेगा न पकड़ेगा न छोड़ेगा, न धन के पीछे पागल होगा। न धन छोड़ने के पीछे पागल होगा।

यदि महल मिले तो वह सोने से इन्कार नहीं करेगा और नहीं तो वह यह कहेगा कि महल मिल जाये तो इसमें तो मैं सो नहीं सकता। उस जीवन में एक समझ, जीने की कला विकसित होगी। दमन जीवन की कला को विकसित नहीं होने देता है और गांधीवादियों के साथ कठिनाई हो गयी है वह यह कि उनके पास जीवन की कला नहीं है और जब वे खुद भी मुसीबत में पड़े हैं और चूंकि उनके हाथ में सत्ता है इसलिए वे दूसरे को भी मुसीबत में डाल रहे हैं। वे जो भी कह रहे हैं, उनका जीवन खुद गलत हो गया है। वही वह पूरे मुल्क में समझा रहे हैं। छोटे छोटे बच्चों को भी वही समझा रहे हैं जो उनकी जिन्दगी में गलत हो गया है वही समझाये चले जा रहे हैं। अब गांधी शताब्दी चलती है तो वर्ष भर वही प्रचार कर रहे हैं जो उनकी जिन्दगी में ही असफल हो गया है उसी का वह प्रचार कर रहे हैं। वह पूरे मुल्क को असफल करना चाहते हैं। इस पर चिंतन होना चाहिए। मैं समझता हूं, महात्मा गांधी से ही नहीं भारत को महात्मा मात्र से मुक्त होने की जरूरत है महात्मा गांधी का सवाल नहीं है। भारत को दमन की दृष्टि से मुक्त होने की जरूरत है, यह सवाल ज्यादा गहरा और ज्यादा मनोवैज्ञानिक है, यह सवाल ज्यादा आध्यात्मिक है। किसी वाद से नहीं, वाद मात्र से

भारत को मुक्त हो जाने की जरूरत है और अगर हम यह नहीं कर पाते हैं तो हमने जो एक दुर्भाग्य पैदा कर लिया है, अंधकार और एक ऐसी मुसीबत जो कभी हल होगी नहीं और अंधकार एवं मुसीबत को दूर करने का जो उपाय करते हैं मुसीबत और बढ़ती चली जाती है क्योंकि हमारा उपाय वही होता है जिससे मुसीबत पैदा हुई है। वही हम उपाय करते हैं जिससे बीमारी का जो मूल कारण है उसी उपाय को हम और और करते चले जाते हैं। जिस दवा से मरीज बीमार पड़ गया है हम वही दवा और पिलाये चले जाते हैं कि इसे ठीक करना है तो मरीज और बीमार पड़ता चला जाता है। हमने पूरे देश की हत्या कर दी है और अगर आगे हम नहीं सोचते हैं तो खतरा भारी हो सकते हैं। भारत की पूरी प्रतिभा को जंग लगा दी है और जंग लगने के कारण सूत्र रूप में अंततः मैं कह दूँ।

भारत की प्रतिभा को जंग लगने का सबसे बड़ा कारण है कि हम प्रकृति विरोधी हैं। हमें प्रकृति का प्रेमी होना पड़ेगा। जो निसर्ग है जो नेचुरल है, जो स्वाभाविक है उसे पूर्ण मन से स्वीकार करना पड़ेगा। उसी के सहारे, उसी के माध्यम से उसी को विकसित करके हम उभर उठेंगे। जैसे शरीर को स्वीकार करना पड़ेगा, विरोध नहीं और शरीर को ही सीढ़ी बनाकर आत्मा तक पहुंच सकते हैं लेकिन अब तक हम शरीर के विरोध में फंसने की कोशिश करते हैं और तब उल्टा हुआ है। जो हमने चाहा है वह बिल्कुल नहीं हुआ है। आज भारत से ज्यादा मैटीरिअलिस्ट मुल्क खोजना मुश्किल है और हम आध्यात्म की बातें करते हैं और भौतिकवादी हम हद दर्जे के हैं।

एक साध्वी मुझसे मिलने आई थीं। यहाँ बंबई में ही एक मकान में बैठकर हम बातें करते थे। हवा आयी समुद्र से, और हवा को क्या पता, उसने मेरी चादर उड़ायी और साध्वी को मेरी चादर छू गयी। वह साध्वी आत्मा परमात्मा की बात कर रही थी, एकदम घबरा गई। मैंने पूछा क्या हुआ ? बात जारी रखो। उसने कहा, नहीं, आज पुरुष की चादर छू गयी है। मैंने उससे कहा, चादर भी पुरुष और स्त्री होती है, यह मैंने सोचा भी नहीं था अबतक कि चादरों में भी सेक्स होता है, स्त्री और पुरुष का भेद होता है। यह तेरे को किसने बताया। तो साध्वी ने कहा, नहीं, जो पुरुष ओढ़ता है वह पुरुष की हो गयी, जो स्त्री ओढ़ती है स्त्री की हो गयी और पुरुष का हमें कुछ भी नहीं छूना है, अब मुझे प्रायश्चित करना पड़ेगा। मैंने उससे कहा, कि अभी तू आत्मा की बात कर रही थी और कह रही थी कि हम शरीर नहीं हैं। अब मुझे पता चलता है कि तू शरीर तो दूर चादर भी है। वह आत्मा की बातें कहां गयी ? पुरुष की चादर ने आत्मा को भ्रष्ट कर दिया। बातें आत्मा की कर रही है। एकदम शारीरिक है। हद्द शारीरिक है। बाते ब्रह्म की कर रहे हैं, ब्रह्मवादी शूद्रों को पैदा किये जा रहे हैं और शूद्र छू दे अगर किसी महात्मा को तो महात्मा अपवित्र हो जाते हैं। यह जो हमारी असली दृष्टि है हैरानी की है। एक तरफ कहते हैं कि धन बिलकुल बेकार है लेकिन हमसे ज्यादा धन को पकड़ने वाला कोई भी नहीं है। कितने जोर से पकड़ते हैं। इतने जोर मे पकड़ते हैं कि वह धन मुट्ठी में ही रह जाता है। हम उस मुट्ठी को बांधे बांधे मर जाते हैं न उस धन को भोगते हैं न उस धन को जीते हैं न उस धन का उपयोग करते हैं और चिल्लाये चले जाते हैं कि धन बेकार है। जो चिल्लाते हैं, धन बेकार है, अगर उनके भी मूल्यांकन को खोजने जावें तो हैरान हो जायेंगे। मैं जयपुर गया, एक मित्र आये और उन्होंने कहा कि एक बहुत बड़े महात्मा ठहरे हुए हैं, आप चलेंगे ? मैंने कहा, वह बड़े महात्मा हैं, यह तुम्हें कैसे पता चला ? उन्होंने कहा कि खुद जयपुर महाराज उनके पैर छूते हैं तो मैंने कहा, जयपुर महाराज बड़े होते हैं इससे। महात्मा तो बड़े नहीं होते। अगर जयपुर महाराज न छूयें पैर, तो ? महात्मा छोटे हो जायेंगे। जयपुर महाराज बड़े हैं क्योंकि धन उनके पास है तो जिस महात्मा के पैर छूते हैं, वह महात्मा भी बड़ा है। इसके भीतर गहरे में क्या है। धन है, इसमें महात्मा से कुछ लेना देना नहीं है। धन यहां मापदण्ड है। महावीर के भक्त अपनी किताबों

में लिखते हैं कि इतने हाथी, इतने घोड़े, इतने हीरे, इतने माणिक, इतने रथ, इतने महल, इतनी जमीन जायदाद उन्होंने छोड़ी। सबका पूरा ब्यौरा देते हैं। उनसे पूछिए कि यह ब्यौरा किसलिए दे रहे हो? क्योंकि इसी ब्यौरे पर पता चलेगा कि महावीर कितने बड़े तपस्वी थे। यही ब्यौरा बतायेगा कि महावीर कितने बड़े आदमी थे। अगर महावीर किसी गरीब के घर में पैदा होते तो तीर्थंकर नहीं बन सकते थे। क्योंकि घोड़ा, हाथी कहां से छोड़ते। जब था नहीं छोड़ने को तो छोड़ते क्या।

यही तो वजह है हिन्दुस्तान में कि एक गरीब आदमी का बेटा न तीर्थंकर बना न अवतार बना। अब तक नहीं बन सका। बन भी नहीं सकता। क्योंकि हम धन को नापने और पकड़ने वाले लोग हैं। जैनियों के २४ तीर्थंकर राजाओं के लड़के हैं। बुद्ध राजा के लड़के हैं। राम, कृष्ण सब राजा के लड़के हैं। हिन्दुस्तान में गरीब आदमी को भगवान होने की अभी तक के कोई हैसियत नहीं मिल सकी। कुछ कारण होना चाहिए। हमारी पकड़ धन पर है। चाहे हम छोड़ें, चाहे हम पकड़ें, तौलेंगे हम धन को। माध्यम धन होगा, उससे ही नाप चलेगी। और बातें हम धन के विरोध की करते रहेंगे। हमारा सारा का सारा दृष्टिकोण जो हम कहते हैं उससे उल्टा जीते हैं और क्यों ऐसा होता है? आपको मैं दोष दूँ? नहीं, आपको दोष नहीं देता। किसी को दोष नहीं देता। दोष देता हूं चिंतना को, विचार की शक्ति को, हम यह नहीं समझ पाते कि हम जीवन के विपरीत जाकर नहीं जी सकते। अगर कोई आदमी अपने जूते के फीतों को पकड़ कर उठाने की कोशिश करे खुद को और गिर पड़े तो उस आदमी को दोष देंगे आप कि यह आदमी नालायक है। गिर जाता है। उठते नहीं बनता है। नहीं, दोष देना पड़ेगा उसकी बुद्धि को कि वह पागल है। यह नहीं समझ पा रहा है कि अपने ही पैर के जूते के फीते उठाकर कोई अपने को ऊपर नहीं उठा सकता। जैसे कोई आदमी अपने ओंठ से अपने ही ओंठ को चुंबन करने की कोशिश करे और चुंबन तो ले नहीं सकता, अपने ही ओंठ का। चुंबन तो दूसरे के ही ओंठ का लिया जा सकता है तो पागल हो जायेगा। जैसे कभी किसी कुत्ते को देखा हो कि अपनी पूंछ को पकड़ने की कोशिश में छलांग लगाता है जितना उचकता है, पूंछ उतनी सरक जाती है। उस कुत्ते को पता नहीं कि पूंछ अपनी ही है पकड़ेगी कैसे। तुम उचकोगे तो पूंछ भी उचक जायगी।

करीब करीब भारत ऐसी ही असंभव एडवर्ड नासमझी में भरे हुए काम करने में लगा हुआ है। जिन्दगी से उल्टा जीने की कोशिश कर रहा है, और जिन्दगी हम खुद हैं। हम अपने से उल्टे जा कैसे सकते हैं। कोई आदमी अपने से उल्टा कैसे जा सकता है। जाने की कोशिश में टूट जायगा। नष्ट हो जायगा, परेशान हो जायगा। चिन्ता से भर जायगा। अशांत हो जायगा। मुश्किल में पड़ जायगा। नहीं, जिन्दगी को स्वीकार करना पड़ेगा। एक लाइफ आफ अफरमेशन चाहिए, जिन्दगी का स्वीकार चाहिए। हमारा दृष्टिकोण लाइफ निगेटिव है। हम जीवन के विरोध करने वाले लोग, निषेध करने वाले लोग हैं। जीवन निन्दित है। कंडेम्ड है। जीवन बुरा है, जीवन असार है। मैं आपसे कहना चाहता हूं जीवन धन्यता है। ब्लेसिंग है, जीवन स्वयं परमात्मा है। कहीं और कोई परमात्मा नहीं है, जीवन के अतिरिक्त। और कहीं कोई मोक्ष नहीं है जीवन के अतिरिक्त। तो जीवन को हम कैसे जियें और जीवन की धारा में कैसे बहें, ? अगर एक नदी पूर पर आयी हो तो नासमझ आदमी तैरने की कोशिश करेगा और तैरने की कोशिश में बह जायगा। समझदार आदमी धारा के साथ बहेगा और धीरे धीरे किनारे पर पहुंच जायगा। यह सब समझ लेना। समझदार आदमी ही पार हो जायेगा लेकिन पहली बात धारा के साथ बहेगा। क्योंकि धारा इतनी तेज है कि उसके विपरीत अपने को छोड़ा नहीं जा सकता। उसके साथ बहो और साथ बहते हुए किनारे पर चले जाओ। धारा का उपयोग करो, लड़ो मत। धारा ही तुम्हें किनारे पहुंचा देगी। लेकिन हम धारा से लड़ने खड़े हो जाते हैं।

जापान में कुश्ती लड़ने की कला होती है जिसे जूडो कहते हैं। जूडो की कला का नियम अद्भुत है और सारी दुनिया के समझदार लोगों को समझ लेना चाहिए। जूडो का नियम यह है कि अगर कोई तुम्हें घूंसा मारे तो तुम खड़े मत हो जाओ। तुम बिलकुल ढीले हो जाओ। घूंसे को पी जाओ। तुम घूंसे को झेल लो। उसे पूरी तरह से ले लो। विरोध मत करो तो घूंसे मारने वाले का हाथ टूट जायगा और अगर तुम कड़े होंगे तो तुम्हारी हड्डी टूट जायगी। आपने देखा है, कि अगर आप एक बैलगाड़ी में बैठे हैं और साथ एक शराबी बैठा हो नशे में तो बैलगाड़ी उलट जाय तो आपको चोट लगेगी शराबी को कम लगेगी या नहीं भी लगे क्योंकि वह होश में नहीं है। वह कड़े नहीं होगा, वह ढीला ही रह जायगा। गाड़ी उलट गयी तो उलटने के साथ वह एक हो जायगा और आप? पता चला कि गाड़ी उलट गयी कि कड़े हो जायेंगे आपकी हड्डी टूट जायगी। छोटा बच्चा भी गिरता है हजार दफे गिरता है दिन में लेकिन हड्डी नहीं टूटती। आप एक दफे गिर जायें तो टूट जायगी। बात क्या है? बच्चा गिरने के विरोध में खड़ा नहीं होता। गिरने के साथ एक हो जाता है। वह गिरने में एक ही हो जाता है। रेजिस्ट नहीं करता है विरोध नहीं करता है। जिन्दगी की बड़ी धारा के साथ एक होने की जरूरत है। हमारे महात्मा सिखाते हैं उल्टे चलो। हां तैरो, लड़ो, धारा से जीतने की कोशिश करो, संयम, नियंत्रण, दमन, यह सब विपरीत जाने की चेष्टायें हैं। मैं आपसे कहता हूं कि जिन्दगी को जियो, अगर जिन्दगी कहती है कि स्वाद लो तो स्वाद लो और इतने अर्थ से, इतनी बुद्धिमत्ता से स्वाद लो कि स्वाद लेते लेते स्वाद से मुक्त हो सको। अगर मन कहता है कि बहुत महीन और रेशमी कपड़े पहनें तो पहनो लेकिन पहनो इतने समझ से कि उसे पहनकर तुम जल्दी से जान लो कि बहुत कुछ नहीं है और मुक्त हो सको लेकिन वह मुक्ति बहुत दूसरी होगी। उस मुक्ति में तुम्हारे भीतर कुछ दमन नहीं होगा। दमन नहीं होगा तो उसके फूटने की कोई संभावना नहीं होगी। और जो दबाया जायेगा, वह फूटता है।

एक छोटे से रेस्ट हाउस में मैं ठहरा हुआ था। उस राज्य के एक मंत्री भी उस रेस्ट हाउस में ठहरे हुए थे। रात मैं भी लौटा, और वे भी। मैं तो अपने बिस्तर पर सो गया। वे दूसरे कमरे में करवट बदलते रहे। फिर वे उठकर आये और उन्होंने कहा कि मुझे नींद नहीं आती। ये बाहर कुत्ते इकट्ठे हैं और शोर करते हैं। मैंने कहा, कुत्ते अखबार भी नहीं पढ़ते, रेडियो भी नहीं सुनते होंगे। उनको पता भी नहीं होगा कि आप आये हुए हैं। उन्हें आपसे क्या मतलब? आप सो जाइए। तब उन्होंने कहा कि मैं कैसे सो जाऊं जब तक शोरगुल करते हैं मुझे नींद नहीं आती। मैंने कहा, उनके शोरगुल से आपकी नींद के न आने का मेरी समझ में कोई सम्बन्ध नहीं मालूम होता है। वे दो चार दफे उनको भगाये। जितना भगाते वे कुत्ते और वापस लौट आये, दो चार और साथ ले आये तो सारा रेस्ट हाउस कुत्तों के भूंकने से भर गया। आखिर वे मिनिस्टर परेशान हो गये, उन्होंने कहा, "क्या करूं, आप बताइए। मैंने कहा कि आप एक काम करिये। आप कुत्ते के भूंकने को स्वीकार कर लीजिये, विरोध मत करिये। आप लेट जाइए और कहिये कुत्ते भूंकते हैं और मैं सोता हूं। इन बातों में विरोध कहाँ है, झगड़ा कहाँ है। आप चाहते हैं कि कुत्ते न भूंकें तब झंझट शुरू हो जाती है। झगड़ा कुत्ते के भूंकने से नहीं है आपके इस विचार से कि कुत्ते मत भूंकें। बस वे विचार आपको दिक्कत दे रहे हैं। कुत्ते क्या दिक्कत देंगे। आप इस विचार को छोड़ दें। कुत्ते भूंकते हैं, उनकी आवाज गूंजने दें। आवाज गूंजेगी, चली जायगी। आप चुपचाप पड़े सुनते रहें, स्वीकार कर लें कुत्तों के भूंकने को। उनके भूंकने में बह जायें, लड़ें मत। कोई रास्ता नहीं था तो उन्होंने माना। वे जाकर सो गये। पन्द्रह मिनट बाद शायद उनकी नींद लग गयी होगी। सुबह उठकर उन्होंने मुझसे कहा कि मैं इतना गहरा जिन्दगी में कभी नहीं सोया और यह तो आश्चर्य था, और जब मैंने स्वीकार कर लिया तो मैं हैरान हुआ कि कुत्तों के भूंकने से तो कोई बाधा पड़ती ही नहीं। बाधा मेरे ख्याल में थी, मेरे एटीट्यूड में थी। जिन्दगी परमात्मा तक पहुंचाने में जरा भी बाधा नहीं देती। न स्वाद, न शरीर, न सेक्स, कुछ भी बाधा नहीं देता।

हमारा एटीट्यूड, हमारा दृष्टिकोण कि लड़ना है सबसे, बस फिर हम मुश्किल में पड़ जायेंगे।

गांधीजी की दृष्टि स्वयं से लड़ने की दृष्टि है और इसलिए अत्यन्त खतरनाक है। उस खतरे के आस पास जो लोग इकट्ठे हुए थे वे असफल हो गये हैं। असफल होना सुनिश्चित था। उनकी आलोचना का कोई प्रयोजन नहीं है। अब तो समझने की बात यह है कि भविष्य में हम इस देश के लोग इस तरह की नासमझियों में पड़ते चले जायेंगे या सोचेंगे और खोजेंगे इस बात को कि जीवन की धारा में बहकर परमात्मा तक पहुंचने का कोई रास्ता है। मैं मानता हूं रास्ता वही और यह सारे के सारे दृष्टिकोण हैं विरोध के, निषेध के, दमन के, हिंसा के, आत्महिंसा के, अपने से लड़ने के, यह अपने ही दोनों हाथों से लड़ने की तरह है। अगर आप अपने दोनों हाथ लड़ायेंगे तो कोई नहीं जीतेगा। आप हार जायेंगे। दोनों हाथ लड़ेंगे आपकी शक्ति नष्ट होगी और कहीं आप नहीं पहुंचेंगे। यह मैं कहता हूं कि गांधीवादी नहीं गांधीवादियों की हार से गांधीजी की पूरी दृष्टि पर पुनर्विचार के योग्य हो गया है और गांधीजी की ही दृष्टि नहीं, हिन्दुस्तान की पूरी दृष्टि क्योंकि गांधीजी हिन्दुस्तान की दृष्टि के प्रतिनिधि पुरुष रिप्रेजेन्टेटिव हैं हमारे दिमाग के। हमारा जो पांच हजार वर्षों में मस्तिष्क विकसित हुआ है जो ट्रेडीशनल माइंड है, परम्परा से भरा हुआ मन, शास्त्रों से भरा हुआ मन, दमन से भरा हुआ मन गांधीजी उसके प्रतिनिधि पुरुष हैं इसलिए वे सफल हुए और मैं मानता हूं, गांधी के बाद अब एक नया युग शुरू हो सकता है। अगर हमने गांधी के साथ हिन्दुस्तान की पूरी परम्परा पर पुनर्विचार किया तो हम एक नये युग में प्रवेश कर सकते हैं। गांधीवादियों से तो जल्दी मुक्ति हो जायेगी, उसमें देर नहीं है। वे अपने हाथ से ही मुक्ति का उपाय करते चले जायेंगे। पन्द्रह साल के भीतर गांधीवादियों से हमारी मुक्ति सुनिश्चित है। इसमें कोई कठिनाई नहीं है। वह तो हो जायेगी। वह तो ऐतिहासिक प्रतिक्रिया के द्वारा अपने आप हो जायेगी, उसमें कठिनाई नहीं है। गांधीजी से मुक्ति में कठिनाई है। और गांधीवादी से मुक्त होने के बाद गांधीजी से मुक्त होने में बड़ी कठिनाई पड़ जायेगी। जब तक यह हैं तब तक उनको देखने से गांधी पर भी ख्याल आता रहेगा। जब ये विदा हो जायेंगे तो गांधी एकदम भगवान हो जायेंगे, फिर उनसे छुटकारा बहुत मुश्किल हो जायेगा। गांधी से मुक्ति चाहिए। गांधी से मुक्ति का मतलब यह है—गांधी से मेरा व्यक्तिगत कोई प्रयोजन नहीं है। गांधी से मुक्ति का मतलब है, हिन्दुस्तान के पुराने चित्त, पुराने मन, पुरानी आत्माओं से मुक्ति चाहिए। एक नयी आत्मा इस देश को मिल सके तो यह देश विकसित हो सकता है, स्वस्थ हो सकता है, चरित्रवान हो सकता है, धार्मिक हो सकता है, सुखी हो सकता है। और अगर हम पुरानी ही धाराओं में फिर फिर चलते रहे तो हम कोल्हू के बैलों की तरह घूम गये हैं। न हम सोचते, न हम विचार करते, न खोजते हैं और हमने अपने जीवन को एक बिल्कुल नर्क बना लिया है। अब हमें नर्क में जाने की जरूरत नहीं है। भारत में पैदा होना नर्क में होने के बराबर है। अब तो हमें कहीं जाने की जरूरत नहीं है।

ये थोड़ी सी बातें मैंने कहीं। मेरी बात मान लेना आवश्यक नहीं है क्योंकि न तो मैं कोई महात्मा हूं, न कोई महात्मा होना चाहता हूं। न मेरा कोई अनुयायी है, और न मैं कोई अनुयायी इकट्ठे करना चाहता हूं। तो मेरी बात से राजी होने की कोई भी जरूरत नहीं है। मेरी बात सिर्फ सोचना इतना काफी है। विचारना, देखना कि कोई बात ठीक मालूम पड़े तो, गलत मालूम पड़े तो, उस पर सोचना, खोजना और अगर वह आपके विवेक को ठीक लगे तो वह बात आपकी हो जायेगी, मेरी नहीं रह जायगी। और जो सत्य आपका हो जाता है वही सत्य आपको बुद्धिमान बनाता है। जो सत्य दूसरे का है वह आपसे बुद्धि छीनता है और आपकी प्रतिभा को नुकसान पहुंचाता है।

# सत्य और जीवन खोज की दिशा

## ( आचार्य श्री से कल्याण जी आनंद जी की भेंट )

( बम्बई जीवन जागृति केन्द्र के सौजन्य से )

( अगले अंकों में आप पढ़ चुके हैं कि निगेटिव माइंड की ट्रेनिंग होनी चाहिए, अन्यथा हमारा विचारक, कलाकार, संगीतकार, विक्षिप्तता के घेरे में घूमेगा । अज्ञात को शून्य को जानकर ही अनंत पोजिटिविटी के द्वारों को खोला जा सकता है, लेकिन होगा यह निगेटिव माइंड से ही । निगेटिव माइंड ही पहली दफा यह बात जान लेता है कि एक एक क्षण जीने जैसा है और वह इतना आनन्दपूर्ण है कि उसे हम जियें ।

चरित्र चाहे किसी भी काल में हो वह जागे हुए व्यक्तित्व का परिणाम है । मैं पाखंड को सबसे बड़ी चरित्रहीनता मानता हूं कि मैं वैसा दिखाने की कोशिश करूं जैसा मैं नहीं हूं । चरित्रवान आदमी इकहरे तरह का व्यक्ति होगा, उसकी पर्सनलिटी एक होगी और इसके लिए वह सब दुख, सब परेशानियां झेलने के लिए राजी होगा । और अब इस वार्ता की अंतिम किश्त यहां प्रस्तुत है : )

प्रश्न—तो क्या अगर कोई कांसेस हो तो डर नहीं हो सकती ? और किसी को डर नहीं सकता ?

उत्तर—कांसेस होना जो है, अगर कोई पूरी तरह कांसेस है तो सब चीज के प्रति कांसेस है जो भी हो रहा है चारों तरफ । एक चीज के प्रति कांसेस हो तो बाकी के प्रति सोये हुए हो । तो कांसेस होने का मतलब है सब चीज के प्रति कांसेस होना । लेकिन कांसेसनेस के होने से फियर कभी पकड़ता नहीं । और हैरान होगे तुम, न फियर पकड़ सकता है कांसेसनेस को, न मृत्यु पकड़ सकती है कांसेसनेस को न जिन्हें हम बुरा कहते हैं, क्रोध है, घृणा है, हिंसा है, हत्या है, वह कोई पकड़ सकता है । कांसेसनेस के क्षण में तुम एक नये बच्चे हो और तुम खड़े हो जाते हो । तुम्हें इतनी इनोसेंट हो जाती है जिसका कोई हिसाब नहीं । कुछ भी नहीं पकड़ता, और पकड़ा कि तुम कांसेसनेस के बाहर गये । छिटक गयी बात । फियर किसको पकड़ा ? एक आदमी झांक कर देख रहा है और मैं डर गया तो डरा क्या ? डरा यह कि मेरा चित्त चला इस क्षण से बाहर, सोचा कि अब पकड़ाऊंगा, अब सजा होती है, अब बदनामी होती है । वह गया मेरा चित क्षण से बाहर । मैं बेहोश हो गया । एक मैं दूसरी घटना सुनाऊं इस तरह की ।

जापान में एक मास्टर थीफ हुआ है । एक चोर है जो साधारण चोर नहीं है, जो मास्टर ही कहा जाता है । वह चोरी का कला गुरु है और उसकी इतनी प्रसिद्धि है कि जिस घर में वह चोरी कर लेता है उस घर के लोग दूसरे से कहते हैं, यह पता है, हमारे घर मास्टर थीफ ने चोरी की है । साधारण चोरी वह करता ही नहीं । यह कीमत की बात है कि उनके घर में वह आदमी

घुस गया। साधारण घर हो तो वह कदम नहीं रखता। तो लोग चर्चा करते हैं कि हम साधारण लोग थोड़े ही हैं, हमारे घर में फलाँ चोर घुस गया था। वह कभी नहीं पकड़ा गया है। वह बूढ़ा हो गया है। उसका लड़का जवान है। वह लड़का उससे कहता है कि अब आप तो बूढ़े हो गये हैं कितने दिन के हैं, कहा नहीं जा सकता। आप अपनी कला मुझे सिखा दें। वह चोर उससे कहता है कि कला के साथ यही खराबियां हैं क्योंकि उसे सिखाना मुश्किल है। चोर कहता है कि कला के साथ यही खराबी है। मैं कोई साधारण चोर थोड़े ही हूं कि तुझे चोरी सिखा दूं। चोरी अगर मेरा व्यवसाय हो तो तुझे सिखा सकता हूं। धंधा सिखाया जा सकता है और कला नहीं सिखायी जा सकती। वह मेरे लिए आनन्द है, वह कोई ऐसा मामला नहीं है कि मैं सब चीजों को चुरा लेता हूं। वह चोरी में कुशलता है, बड़ी मुश्किल है तुझे सिखाना। लेकिन एक कोशिश करके देखेंगे अगर तेरे भीतर चोर होने की जन्मजात क्षमता है—सभी कलाकार यही मानते हैं कि जन्मजात क्षमता होनी ही चाहिए। तो वह कलाकार कह रहा है कि तुम जन्मजात चोर हो तो कुछ निकल सकता है। खैर, आज चल। अंधेरी रात है, अमावस है, वह उसको ले गया। बेटे को लेकर गया है। उसकी उम्र कोई सत्तर साल है, बेटा जवान है। जब वह एक महल के पास जाकर दीवाल तोड़ रहा है, सेंध बना रहा है तब बेटा उसका कंप रहा है और उस बूढ़े के हाथ में न कोई कंपन है, न कोई बात है। वह ऐसे दीवाल खोद रहा है जैसे अपने घर की दीवाल सुधारता हो। बेटा कहता है कि आप यह क्या कर रहे हैं, जरा भी घबरा नहीं रहे हैं। कोई अचानक आ जाय, कोई पकड़ ले, कोई आवाज हो जाय? तो उस बूढ़े ने कहा ये सब बातें हो सकती हैं अगर मैं घबरा जाऊं। आवाज भी हो सकती है, कोई आ भी सकता है, पकड़ा भी जाऊं, ये सब बातें बेटे भय में घटती होती हैं। इनकी वजह से भयभीत नहीं होता कोई। भय की वजह से ये बातें घट जाती हैं। तू चुपचाप खड़ा रह। वह बेटे से कह रहा है कि तू भयभीत है? वह कहता है कि मेरे समझ में नहीं आता है कि क्या होगा? बूढ़े ने सब दीवाल खोद ली है, वह अन्दर चला गया है। बेटे को कहता है भीतर आ जाओ। वह बेटे को लेकर एक एक दीवाल को खोदते हुए महल के भीतर कक्ष में पहुंचा है। वहां एक बड़ी अलमेरा है जिसमें बहुमूल्य कपड़े और सामान रखे हुए हैं। अपने बेटे को कहता है कि तू भीतर चला जा और तुझे जो भी अच्छा लगता है वह निकाल ला। वह भीतर जाता है, उसे कुछ दिखायी नहीं पड़ रहा है। अच्छा, बुरे का कहां सवाल है? सिर्फ उसके मन में आ रहा है कि क्या होगा, क्या नहीं होगा। जब वह भीतर गया, बाप ने अलमेरा बन्द कर दिया, ताला लगा दिया और जोर से चिल्लाया कि चोर-चोर। सारे घर में हुल्लड़ मचा और बाप तो निकल कर भाग गया। वह बेटा उस अलमारी के भीतर बन्द हो गया और सारे घर के लोग निकल आये हैं, लालटेनें निकल आयी हैं, बत्तियां जल गयी हैं, नौकर खोज रहे हैं, मालिक खोज रहे हैं। और बेटे ने कहा, मार डाला, यह क्या हुआ, यह तो मुश्किल हो गयी, मैं गया पहले ही दिन इसमें चोरी सीखने का सवाल ही न रहा। अब तो मेरी समझ के बाहर है कि क्या होगा, यह बाप ने क्या किया।

एक नौकरानी वहां से एक मोमबत्ती लिए हुए निकलती है उसके पास से। जिसको अमरीका में इस वक्त 'को—हैपनिंग' कहते हैं। उसके लिए अपने पास कोई शब्द नहीं है। जैसे ही नौकरानी वहां पास से निकलती है, कुछ होता है और वह ऐसी आवाज करता है जैसे चूहे कपड़े काट रहे हैं। हाथ से लकड़ी पर खरोंच मारता है। नौकरानी समझती है कि शायद चूहा बिल्ली अन्दर रह गये हैं। दरवाजा खुलता है और हाथ मोमबत्ती का अंदर ले जाती है। यह भी हैपनिंग है। वह फूंक मारकर मोमबत्ती बुझा देता है। धक्का मारता है और भागता है वहां से। उसके पीछे दस पन्द्रह आदमी भागते हैं। अब वह आखिरी शक्ति से भाग रहा है जैसा वह कभी नहीं भागा था क्योंकि उसे पता ही नहीं था कि इतना वह भाग सकता है। वह एक कुएं के पास पहुंचा है। फिर हैपनिंग ही है यह। वह कुएं के पास पत्थर उठाकर जोर से कुएं में पटकता है और एक झाड़ के पीछे खड़ा हो जाता है। पन्द्रह आदमी

उस कुएं को घेर कर खड़े हो गये हैं। चोर तो कुएं में कूद गया है, अपने आप मर जायेगा। अब इतनी रात को कौन परेशान हो, सो जाओ। सुबह आकर देखेंगे, बच जाता है तो ठीक है, नहीं तो लाश निकालेंगे। वह वापस लौट जाते हैं। वह लड़का झाड़ के पीछे खड़ा हुआ और घर पहुंच गया है। बाप कम्बलों में आराम से सो रहा है। कम्बल छीनता है और उसकी जोर से गर्दन पकड़ लेता है: क्या मेरा जान ले लेना चाहते हैं, यह तुमने क्या किया ? वह बाप कहता है, जो हुआ, हुआ। तुममें चोर होने की क्षमता है। सुबह बात करेंगे। वह कहता है कि तू आ गया, बस काफी है, बाकी बातें बाद में करेंगे। तू आ गया, ठीक है। तू चोर हो सकता है। वह बेटा कहता है, अभी सब बतायें। वह बाप कहता है बिस्तार में बातें जानने का कोई मतलब नहीं है। तू बिना सोचे समझे कुछ कर सकता है और चोर होने में यह जरूरी गुण है क्योंकि प्लान से चोरी नहीं हो सकती। दूसरे के घर में प्लान अपनी चल नहीं सकती। दरवाजा कहाँ, दीवाल कहाँ है। कुछ पता नहीं, कब क्या हो जाय ? बिल्ली कूद जाय, बर्तन गिर जाय ? कुछ पता नहीं, सब अनजान है। कहता है कि सिर्फ होश काफी है कि क्या हो रहा है। उसके साथ हम रिएक्ट कर सकें। यह जो सारी जीवन की सिचुएशन है वह भी ऐसी ही है अगर बहुत गौर से हम देखें। वहां क्या होता है, क्या पता है ? अभी हम यहां बैठे हैं एक क्षण में क्या होता है, क्या पता है ? कुछ भी पता नहीं है। यह मकान गिर जाय, क्या हो जाय, क्या पता है ! अभी कल्याण जो प्रेम से बुलाये हैं, उनका दिमाग खराब हो जाय, वह सबको निकाल बाहर कर देंगे, क्या पता है ! यह सब हो सकता है। तो कोई ऐसे जी नहीं सकते कि हम पहले से बना बना के जियें और जो बना बना के जियेगा वह आदमी जीता ही नहीं, उसका जीना एक तरह का उधार होगा बारोड ( Borrowed ) होगा। जीने की अगर पूरी बात हो तो जिन्दगी में हमें पूरी तरह सजग होकर जीना चाहिए और एक एक स्थिति की चुनौती का सामना करना चाहिए। और जो उससे आये तो अच्छे केरैक्टर के आदमी की मैं यह मानूंगा कि वह हर सिचुएशन में सजग होकर जी रहा है। जो भी समय आये, जो भी जिन्दगी मौका लाये वह जागा हुआ जी रहा है। जो होगा वह करेगा। न उसे करने लिए कोई पछतावा है पीछे। पछतावा सिर्फ सोये हुए आदमी को होता है क्योंकि वह सोचता है कि इससे अन्यथा भी मैं कर सकता था। जागा हुआ आदमी कहता है, जागा हुआ था अन्यथा कुछ हो ही नहीं सकता था। जो हुआ सो हुआ, बात खत्म हो गयी। जो हो सकता था वह मैंने किया क्योंकि मैं पूरा जागा हुआ था। इससे ज्यादा कोई उपाय ही नहीं है। इसलिए जागा हुआ आदमी न पीछे लौटकर देखता है, न पछताता है, न दुखी होता है। न जागा हुआ आदमी आगे के लिए बड़ी योजना बनाता है, हिसाब करता है। सब तय करके चलता है ऐसा कुछ भी नहीं है और जब जीने में जो सघनता आ जाती है उसकी, क्योंकि न वह अतीत में होता है, न भविष्य में, वह यहीं होता है। तो पूरा का पूरा जो इन्टीग्रिटी चाहिए जिन्दगी की सघनता में उसको उपलब्ध होती है। और उस क्षण में वह जो जानता है और जो आप पूछते हैं कि सब सापेक्ष है। न, उस क्षण में जिसे वह जानता है, वह निरपेक्ष है। वह जो निरपेक्ष है और सब सापेक्ष होगा आवर्तन आना जाना है। एक बैलगाड़ी चल रही है, सारा चाक घूम रहा है। वह एक कील बिना घूमे हुए खड़ी है। वह नहीं घूमती है कील, तो उस पर चाक का घूमना है। वह कील भी घूम जायेगी, चाक घूम जायेगा। तो चाक को घूमता देखकर यह मत सोचना कि चाक में न घूमने वाला चाक भी नहीं है। मजा यह है कि वह घूमने वाला चाक किसी न घूमने वाली कील पर ही खड़ा है, नहीं तो खड़ा ही न रहेगा। यह जो सापेक्ष का इतना बड़ा घूमता वृक्ष है इसका तत्व बिल्कुल निरपेक्ष है, वहीं हम हैं। उसे कोई साक्षी कहे, आत्मा कहे, ब्रह्म कहे कोई फर्क नहीं पड़ता। लेकिन एक तत्व जिसके आंख के सामने से जाता है, पर्दे पर सारी तस्वीरें वह निरपेक्ष है लेकिन इसे हम तत्क्षण नहीं जान सकेंगे, साधारण अनुभव में नहीं जान सकेंगे। ●●●

# पत्र प्रेरणा

(आचार्य श्री द्वारा सौ० शिरीष पै, को लिखे गये कुछ मार्ग-निर्देशक पत्र)

प्यारी शिरीष,

प्रेम। प्रभु के लिए ऐसी प्यास से आनंदित हूं। सौभाग्य से ही ऐसी प्यास होती है और जहाँ प्यास है वहाँ मार्ग भी है। वस्तुतः तो प्रगाढ़ अभीप्सा ही मार्ग बन जाती है। परमात्मा तो प्रतिक्षण ही पुकार रहा है किन्तु हमारे हृदय के तार ही सोये हों तो वे प्रतिध्वनित नहीं हो पाते हैं। आँखें हम बंद किये हों तो सूर्य के द्वार पर खड़े होते हुए भी अंधकार ही होगा। सूर्य सदा ही द्वार पर है और उसे पाने को बस आँख खोलने से ज्यादा और कुछ भी नहीं करना है।

... प्रभु प्रकाश दे यही मेरी कामना है।
मैं और मेरा प्रेम सदा साथ है।

रजनीश के प्रणाम
११।३।१९६६

२.

उस दिन मिलकर मैं बहुत आनंदित हुआ हूं। तुम्हारे हृदय में जो आंदोलन चल रहा है, वह भी मैंने अनुभव किया और वह अभीप्सा भी जो कि तुम्हारी आत्मा में छिपी है। तुम अभी तक अपने उस व्यक्तित्व को नहीं पा सकी हो, जिसे पाने के लिए पैदा हुई हो। उसका बीज अंकुरित होना चाहता है। और भूमि भी तैयार है और बहुत प्रतीक्षा की जरूरत नहीं है। श्रम करना होगा और संकल्प को इकट्ठा करना होगा। एक बार यात्रा प्रारंभ होने की ही बात है फिर तो परमात्मा का गुरुत्वाकर्षण खुद ही खींचे लिए जाता है।

रजनीश के प्रणाम
२६।३।१९६६

३.

मैं प्रवास से लौटा हूं तो तुम्हारा पत्र मिला है। जिस संकल्प का तुम्हारी अंतरात्मा में जन्म हो रहा है, मैं उसका स्वागत करता हूं। संकल्प की प्रगाढ़ता ही सत्य तक ले जाती है क्योंकि उसकी ही आधारभूमि पर स्वयं में अंतर्निहित शक्तियाँ जागृत होती हैं और असंगठित प्राण संगठित हो संगीत को उपलब्ध होते हैं। स्वयं के प्रण में

कतनी विराट ऊर्जा है, उसे तो संकल्प की परम तीव्रता के अतिरिक्त और किसी भी भाँति नहीं जाना जा सकता है। क्या तुमने ऐसी चट्टानें नहीं देखी हैं, जिन्हें कि मजबूत से मजबूत छैनी से भी तोड़ा नहीं जा सकता है; लेकिन उन्हीं चट्टानों को किसी झाड़ी या पौधे का अंकुरण सहज दरारों से भर देता है। एक छोटा सा बीज भी जब ऊपर उठने और सूर्य को पाने के संकल्प से भर उठता है तो चट्टानों को भी उसे मार्ग देना ही पड़ता है। कमजोर बीज भी शक्तिशाली चट्टानों से जीत जाता है। कोमल बीज भी कठोर से कठोर चट्टान को तोड़ देता है। क्यों ? क्योंकि चट्टान चाहे कितनी ही शक्तिशाली क्यों न हो, मृत है और मृत है इसलिये संकल्पहीन है। बीज है कोमल और कमजोर किन्तु जीवित।

स्मरण रहे कि जीवन संकल्प में है। संकल्प जहां नहीं, वहां जीवन भी नहीं है। बीज का संकल्प ही शक्ति बन जाता है। उस शक्ति को पाकर ही उसकी छोटी छोटी जड़ें चट्टान में प्रवेश करने लगती हैं और क्रमशः फैलने लगती हैं और एक दिन चट्टान को तोड़ डालती हैं। जीवन सदा ही मृत्यु से जीत जाता है। भीतर की जीवित शक्ति बाहर की मृत बाधाओं से न कभी हारी है, न कभी हार ही सकती है।

रजनीश के प्रणाम
२।४।१९६६

४

. Sense of Humour के संबंध में पूछा है। मिलोगी तभी विस्तार से बात हो सकेगी। लेकिन सबसे पहले विनोद का भाव स्वयं के प्रति होना चाहिये। स्वयं के प्रति हंसना बहुत बड़ी बात है। और जो स्वयं के ऊपर हंस पाता है, वह धीरे धीरे दूसरों के प्रति बहुत दया और करुणा से भर जाता है। इस जगत में स्वयं जैसी हंसने योग्य न कोई घटना है, न वस्तु।

स्वप्नों के सत्य के संबंध में भी विस्तार से ही बात करनी होगी। कुछ स्वप्न निश्चित ही सत्य होते हैं। और मन जितना शांत होता जायेगा, उतनी ही स्वप्नों में भी सत्य की झलकें आनी शुरू होंगी। स्वप्नों के चार प्रकार हैं—(१) बीते जन्मों से संबंधित। (२) भविष्य जीवन से संबंधित। (३) वर्तमान से संबंधित और (४) दमित कामनाओं से संबंधित। आधुनिक मनोविज्ञान केवल चौथे प्रकार के स्वप्नों के संबंध में ही आंशिक रूप से जानता है।

यह जानकर बहुत आनंदित हूं कि तुम्हारा मन क्रमशः शांति की ओर प्रगति कर रहा है। मन वैसा ही हो जाता है, जैसा कि हम चाहें। अशांति और शांति--सब हमारे सृजन हैं। मनुष्य अपने ही हाथों, अपनी ही बनाई जंजीरों में बंध जाता है और इसलिए मन से स्वतंत्र होने के लिए भी वह सदा ही स्वतंत्र है।

Sex के संबंध में पूछा है। वह शक्ति भी परमात्मा की है। साधना से क्रमशः उसका भी रूपांतरण (Transformation) हो जाता है। शक्ति तो कोई भी बुरी नहीं है। हां, शक्तियों के बुरे उपयोग अवश्य हैं। काम वासना ही जब ऊर्ध्वगामी होती है तो ब्रह्मचर्य बन जाती है।

Sex के प्रति विरक्ति आ रही है, यह शुभ है पर इतना ही पर्याप्त नहीं है। उसके रूपांतरण की दिशा में विधायक रूप से साधना करनी आवश्यक है। अन्यथा अकेला निषेध चित्त को रूखा-सूखा, रस शून्य कर जाता है।

यह भी सत्य है कि Sex के जीवन में तुम अकेली नहीं हो; लेकिन मूलतः और गहरे में काम-वासना शरीर की नहीं, मन की वृत्ति है। मन पूर्णतः परिवर्तित हो, तो उसका परिणाम संबंधित दूसरे व्यक्ति पर भी पड़ना शुरू होता है। और जिससे इतने निकट के संबंध हैं, वह तो और भी शीघ्रता से प्रभावित होता है।

अभी, जब तक मुझे नहीं मिलती हो, तब तक कुछ बातें ध्यान में रखना।

१. Sex के प्रति चेष्टित रूप से कोई दुर्भाव नहीं होना चाहिए। विरक्ति आरोपित हो तो व्यर्थ है।

२. मैथुन की अवस्था में भी सजग और जागरूक भाव रखो। उस अवस्था में भी साक्षी रखो। उस क्षण को भी जो ध्यान और सम्यक् स्मृति का क्षण बना लेता है, वही Sex की शक्ति को रूपांतरित करने में सफल होता है।

मैं जब मिलूंगा तब इस संबंध में और बातें हो सकेंगी। ब्रह्मचर्य तो पूरा विज्ञान ही है। उस ओर जाने से क्रमशः आनंद के बहुत से द्वार खुलने प्रारंभ होते हैं। लेकिन, सबसे पहली बात है, स्वयं की शक्तियों के प्रति मैत्री भाव। स्वयं की शक्तियों के प्रति शत्रुभाव रखने से आत्मक्रांति तो नहीं होती, आत्मघात अवश्य ही हो जाता है।

रजनीश के प्रणाम

४।६।१९६६

नवीन प्रकाशन :

१

आजोल साधना शिविर में आचार्य श्री के द्वारा दिए प्रवचनों की अनुपम कृति

## अन्तर्यात्रा

(साधना के जगत् में आचार्य श्री के व्यक्तित्व की
मौलिक सृजनात्मक वाणी)

मूल्य : ३/५०

२

आचार्य श्री के सान्निध्य में श्रीमती उर्मिला जी के अपने व्यक्तिगत अनुभव

## शांति की खोज

(आपके सोये जीवन को जागृति की ओर ले जाने वाली अनूठी कृति)

मूल्य : २ रुपया

अपनी प्रतियां शीघ्र ही सुरक्षित करा लें :

**प्रकाशक :**

जीवन जागृति केन्द्र, रूम नं० ५३, एम्पायर बिल्डिंग डा० डी० एन० रोड,
फोन : २६४५३० बम्बई--१

शीघ्र प्रकाशित :

## सत्य की खोज

(आचार्य श्री के जूनागढ़ साधना शिविर में दिए गए ५ अद्भुत प्रवचन)

---

आचार्य श्री रजनीश की अमृतवाणी की
त्रैमासिक पत्रिका

## "ज्योति शिखा"

(मनुष्य के आध्यात्मिक पुनरुत्थान के लिए समर्पित)

सम्पादक : श्री महिपाल

वार्षिक शुल्क : ५ रु० — एक प्रति : १.२५ न. पै.

प्राप्ति स्थल—
जीवन जागृति केन्द्र, एम्पायर बिल्डिंग, रूम नं० ५३,
दादाभाई नौरोजी रोड, बम्बई-१.
फोन : २६४५३०

---

आचार्य श्री रजनीशजी की सृजनात्मक जीवन दृष्टि का
पाक्षिक पत्र

## युक्रांद

वार्षिक शुल्क—१२)

देश के कोने-कोने में
**विक्रय एजेन्ट** नियुक्त करना है

सम्पर्क करने तथा शुल्क भेजने का
**पता**
अरविंदकुमार, सदस्य, युक्रांद प्रकाशन समिति,
कमला नेहरू नगर, जबलपुर । फोन : २६५७

दीपावली मंगलदायी हो :

हमारे विशेष आकर्षण : उचित मूल्य पर नवीनतम आरामदायक--

सोफा-कम-बेड तथा

वुडन फर्नीचर के

निर्माता :

# अशोक फर्नीचर मार्ट

गजो पुरा मेन रोड, जबलपुर, म. प्र.

---

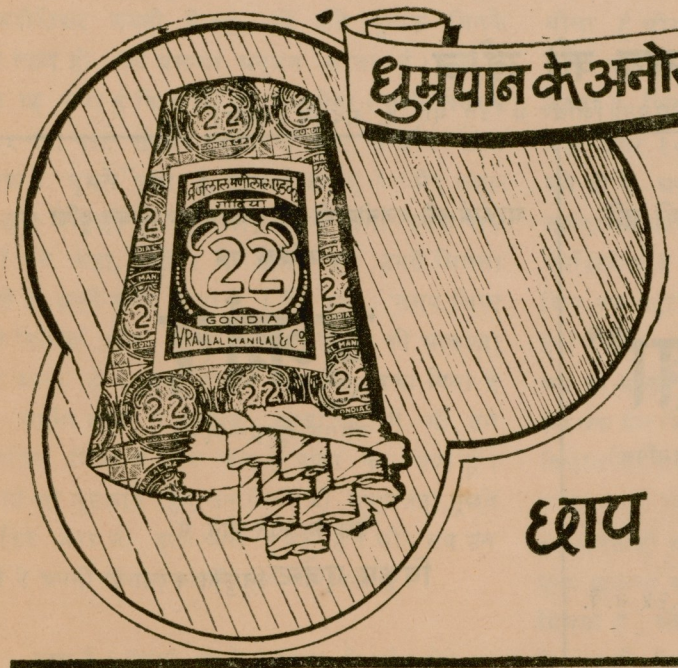


धुम्रपान के अनोखे आनंद के लिये

नंबर

22

छाप बिड़ी

पीजीये.

निर्माता वृजलाल मणीलाल एन्ड कं. गोंदिया.

# तुलसी मानस प्रकाशन

## गुप्ता मिल्स स्टेट, बम्बई--१०

**श्री हरिकिशनदास अग्रवाल द्वारा लिखित :–**

१. **संसार का सार** ( मू. रु. ३ ) आधुनिक खेलों, वैज्ञानिक साधनों, जीव जन्तुओं, वनस्पतियों विभिन्न व्यवसायक व्यक्तियों तथा पदार्थों आदि के द्वारा अध्यात्म शिक्षा देने का यह प्रयत्न नवीन होते हुये अपने प्रस्तुतीकरण के ढंग और साथ ही विवेचन के संदर्भ में एक नवीनता को लिए हुये है। —नवभारत टाइम्स बम्बई

**ज्ञान साधना** (मू. रु. २ ) लोनावाला शिविर में पधारे हुए महापुरुषों के ज्ञानसाधना के प्रति संकेत।

३. **विज्ञान से ज्ञान** (मू. रु. १) ऐक्सरे इत्यादि आधुनिक उदाहरणों को लेकर अध्यात्मविद्या नवयुवकों तक पहुंचाने का सफल प्रयास है।

४. **वेदान्त नवनीत** ( मू. १.५० पैसे) सन् १९६४ के अमृतसर के वेदान्त सम्मेलन में पधारे हुए महात्माओं के प्रवचनों का सार है।

५. **वेदान्त का सरल बोध** ( मू. रु. १ ) वेदान्त के क्लिष्ट ग्रन्थों के सिद्धान्त बड़े ही सरल उदाहरणों द्वारा समझाकर पाठकों के सामने रखे गये हैं।

६. **आध्यात्मिक पिक्टोरियल** [हिन्दी व अंग्रेजी] ( मू. रु. ३ ) इस पुस्तक में ज्ञान की गम्भीर बातों को सूत्र रूप में बाँध कर उन्हें चित्र द्वारा प्रस्तुत किया गया है। वाक्य हिन्दी व अंग्रेजी दोनों भाषाओं में हैं।

७. **मुमुक्ष** [ आध्यात्मिक उपन्यास ] ( मू. रु. ३ ) आध्यात्मिक दृष्टि से पात्रों के जीवन किस प्रकार उपन्यास पाठकों की भौतिक दृष्टि को बदल सकते हैं, इस विषय में एक अत्यन्त ही नया प्रयोग है।

८. **मन की शांति** [पद्य] (मू. रु. ४ ) अंग्रेजी मूल रचना 'पीस आफ माइण्ड' का अनुवाद, जिसमें मन की शान्ति देने वाली गहन आध्यात्मविद्या को सरल भाषा में पद्यबद्ध किया गया है।

९. **हमारी परम्परा** ( मू. रु. २ ) हमारी ऋषि परम्परा क्या है और उसे जीवन में किस प्रकार उतारा जाए—

**और**

**अध्यात्मिक मासिक**

## म न न

जिसमें प्रति मास भारत के उच्चकोटि के विद्वानों के लेख एवं प्रख्यात संत-महात्माओं की अनुभव-पूर्ण वाणी को संकलित कर पाठकों तक पहुंचाया जाता है।

एक प्रति ४० पैसे

वार्षिक ४ रु० दो वार्षिक ७ रु० तीन वार्षिक १० रु०

चार वार्षिक १२ रु० और पांच वार्षिक १५ रु०

*HEARTY WELCOME FOR*

*DIPAWALI*

# Kwality

ICE CREAM

90-A, Industrial Area, Ludhiana

●

ANNOUNCE THE APPOINTMENT OF THE FOLLOWING PARTIES
AS THEIR WHOLESALE AGENTS FOR ICE CREAM

1. M/s Kishore & Co., 4-A Lawrence Road Amritsar.
2. M/s Emkay Traders, Chandra Buildings. Jullundhur.
3. M/s Kwality Ice Cream Centre, Canal Road, Jammu.
4. M/s Upkar Agencies Dharampura, Patiala.
5. M/s Subhash Coffee Bar, Moga
6. M/s Sood & Co., Sadar Bazar, Ambala.

●

**THE PARTIES INTERESTED FOR SUB-AGENCIES**
**IN THE ABOVE NOTED STATIONS MAY CONTACT THESE FIRMS**

DEEPAWALI GREETINGS

# Kwality Restaurant

SADAR JABALPUR

**Sole Distributors**

FOR

Kwality Ice Cream

---

दीपावली के पुनीत पर्व पर

हार्दिक शुभकामनाएं

# अग्रवाल प्रिंटर्स स्टोर्स

दीक्षितपुरा जबलपुर

कोइन्क एवं मुद्रण संबंधी सभी प्रकार

की सामग्री के प्रमुख विक्रेता

दीपावली के मांगलिक पर्व पर हमारी
हार्दिक शुभकामनायें

ऐसा सुन्दर घर आपका भी हो सकता है

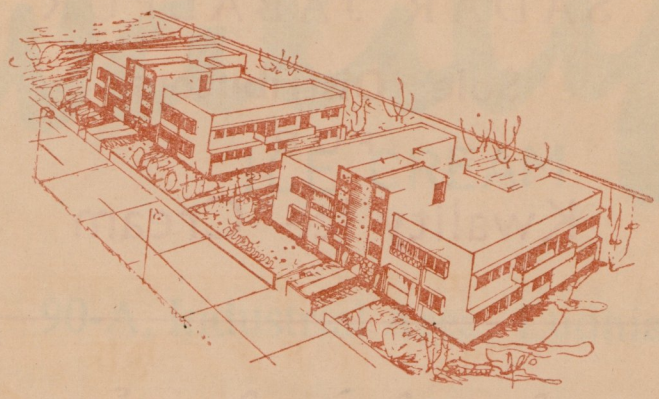

जबलपुर शहर के चारों ओर
जमीन, मकान, प्लाट, दुकान खरीदने, बेचने
व मकान दुकानें किराये से लेने देने हेतु
जायदादें उपलब्ध हैं

मिलिए ( सुबह : ९–१२ या शाम ३–९ ) या लिखिए

# कुबेर भूमि क्रय-विक्रय निगम

## KUBER LAND PURCHASE–SALES CORP.

१५, लार्डगंज (मफतलाल ग्रुप मिल्स के सामने)
बड़ा फुहारा, जबलपुर।

*HAPPY NEW YEAR AND DEEPAWALI GREETINGS.*

Stronachs Z. 34

When you wear

Sikova

EMBROIDERED FABRICS

the best compliments come to you !

दीपावली की शुभकामनायें

मध्यप्रदेश का गौरवशाली प्रतिष्ठान

फोन : २९१५

# राज टाइप एण्ड ब्लाक वर्क्स

५६९, मढ़ाताल, जबलपुर

---

दीपावली सबको सुखदायी हो

आधुनिक साज सज्जा युक्त

नवीनतम माडल की डीलक्स एम्बेसडर कारें

रात व दिन आपकी सेवा में उपलब्ध :

नया मोटर स्टेन्ड जबलपुर

दीपावली पर हार्दिक अभिनन्दन

उत्तम तम्बाकू और कुशल कारीगरों से बनी

शेर और पहलवान छाप बिड़ी

भारत में अग्रणी है

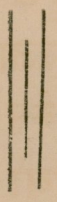

-०-

# मोहनलाल हरगोविंददास

( जबलपुर म० प्र०)

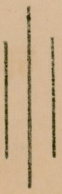

जीवन में दो ही चीजें पाने जैसी हैं। सत्य और प्रेम : लेकिन जो सत्य को पा लेता है, वह अनजाने ही प्रेम में प्रतिष्ठित हो जाता है।


Telegram : SHREYAS.

दुकान : २३५
Phones : ६३५
निवास : १६१

**मेसर्स श्रेणीक कुमार चंद्रकांत**

अनाज, गुड़, चांवल, दाल आदि के कमीशन एजेंट

सुरेन्द्रनगर (गुजरात–W. Rly.)